307

कृष्णदास संस्कृत सीरीज १८१

निगमतत्त्वसारः

भाषाटीकासहितः

टीकाकारः

श्री अजय कुमार उत्तम

चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

कृष्णदास संस्कृत सीरीज
१८१

॥ श्रीः॥

वङ्गलिपिबद्धग्रन्थतः संगृहीतः

निगमतत्त्वसारः

भाषाटीकासहितः

टीकाकारः
श्री अजय कुमार उत्तम

कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

प्रकाशक : कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी

संस्करण : प्रथम, विक्रम संवत् २०५९, सन् २००२

ISBN : ८१-२१८-०११० - ९

पोस्ट बाक्स नं - ११९८

के. ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन

निकट गोलघर (मैदागिन)

वाराणसी - २२१००१ (भारत)

फोन : ३३५०२०

अपरञ्च प्राप्तिस्थानम्

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस

के. ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन

गोलघर (मैदागिन) के पास

पो.बा.नं. १००८, वाराणसी-२२१००१ (भारत)

फोन : (०५४२) ३३३४५८

३३४०३२ एवं ३३५०२० (आवास)

e-mail :cssoffice@satyam.net.in.

KRISHNADAS SANSKRIT SERIES
181

NIGAMATATTVASĀRA

WITH HINDI COMMENTARY

By

SRI AJAYA KUMAR UTTAM

KRISHNADAS ACADEMY
VARANASI

दो शब्द

तांत्रिक वाङ्मय में 'निगमतत्त्वसार' का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस लघु ग्रन्थ में अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण विषयों का समावेश किया गया है। इसीलिए यह ग्रन्थ लघु कलेश्वरयुक्त होते हुये भी गागर में सागर की भांति है। तांत्रिक वाङ्मय पर लिखी गयी महामहोपाध्याय पण्डित गोपीनाथ कविराज की पुस्तक तांत्रिक साहित्य में इसकी विभिन्न पाण्डुलिपियों का वर्णन इस प्रकार किया गया है-

१. (क) श्लोक संख्या १२५ केवल तृतीय पटल तक। इसमें मन्त्र, स्तोत्र आदि के द्वारा सिद्धि की प्राप्ति कही गयी है।

(ख) आनन्दभैरवी और आनन्दभैरव-सम्वादरूप यह ग्रन्थ ११ पटलों में पूर्ण है। इसकी श्लोकसंख्या ४३७ है। उक्त ११ पटलों में निम्न निर्दिष्ट विषय वर्णित हैं- १. तत्त्वसार और ज्ञानसार का निर्देश, २. मन्त्रादि की साधना, ३. स्तव एवं कवच का साधन, ४. चण्डीपाठ का क्रम, ५. प्राण-अपान आदि पाँच वायुओं से किसी एक में मन का संयोग होने पर मन का क्रियाभेद हो जाना, 6. पञ्चतत्त्वों के शोधन का प्रकार, ७ संविदाशोधन विधि आदि।

-राजेन्द्रलाल मित्र के संस्कृत पुस्तकों पर विवरण (क) ४०७ (ख) ४१८४

२. श्लोकसंख्या २००- बड़ौदा पुस्तकालय का अकारादि सूचीपत्र १०१८६

३. ग्यारह पटलों में पूर्ण। इसमें स्तोत्र, मन्त्र, चण्डीपाठ विधि, पञ्च तत्त्वों की शुद्धि आदि विषय वर्णित हैं।

-एसियाटिक सोसायटी बंगाल का सूची पत्र ६०४९-५०

४. आनन्दभैरव-आनन्दभैरवी संवादरूप। इसमें योगसार और तत्त्वसार का निरूपण, पञ्च तत्त्वों का माहात्म्य वर्णन, पञ्च तत्त्वों आदि की शुद्धिविधि, योगविधि, मन्त्रादिसाधनविधि, स्तोत्रादि साधनविधि, कवचविधि, चण्डीपाठक्रम, मद्य, मांस आदि के शोधन की विधि, संविदा कल्प का कथन, अशक्तों के लिये पञ्चतत्त्व विशेष की विधि आदि विषय वर्णित हैं।

-संस्कृत पुस्तकों पर महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री के विवरण २०३

५. श्लोक संख्या ११० शय्याशोधन पुरश्चरण आदि से तत्त्वशोधन पर्यन्त, पूर्ण।
-संस्कृत विश्वविद्यालय वाराणसी पुस्तकालय सूचीपत्र २४४३५

इसका निर्देश सर्वोल्लास तन्त्र में भी प्राप्त होता है। इस प्रकार मात्र ग्यारह पटलो में समाहित अत्यन्त लघु कलेवरयुक्त यह ग्रन्थ तन्त्र के जिज्ञासुओं के लिए अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ को हिन्दी व्याख्या के साथ वर्तमान स्वरूप में प्रकाशित कर कृष्णदास अकादमी वाराणसी ने अत्यन्त ही सराहनीय कार्य करते हुए तन्त्र साधको का महान उपकार किया है। एतदर्थ वे शतशः धन्यवाद के पात्र है। आशा है, यह ग्रन्थ साधकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

-अजय कुमार उत्तम

विषयानुक्रमणिका

*****

शिख

प्रका
तत्व

श्रीरुद्र
सुना
को मु

॥श्रीः॥

वङ्गलिपिबद्धग्रन्थतः संगृहीतः

निगमतत्त्वसारः

भाषाटीकासहितः

◆◆◆◆◆

प्रथमः पटलः

तत्त्वसारमाहात्म्यम्

ॐ कैलासशिखरे रम्ये नानारत्नविभूषिते।
आनन्दभैरवो देवः प्रपच्छानन्दभैरवीम्॥१॥

माधवी- अनेक प्रकार के रत्नों से विभूषित, रमणीय कैलाश पर्वत के शिखर पर स्थित आनन्द भैरव ने आनन्द भैरवी से पूछा॥१॥

श्री आनन्दभैरव उवाच

निगमागमशास्त्रं च मया त्वयि प्रकाशितम्।
तेषां मध्ये सारभूतं वद कान्ते! कुलेश्वरि॥२॥

माधवी- आंनन्दभैरव ने कहा-मैंने तुम्हारे प्रति निगमागम शास्त्र को प्रकाशित कर दिया है। हे कान्ते! हे कुलेश्वरि! उस निगमागम शास्त्र में जो सारभूत तत्त्व है, वह मुझसे कहो॥२॥

पुरा त्वन्मुखाम्भोजाच्छ्रुतं बहुविधं मया।
श्रीरुद्रयामलाख्यं च तथा चोत्तरतन्त्रकम्॥३॥
शक्तियामलाख्यातमन्यद् विस्तारितं प्रिये!।
योगसारं समाख्यातं तथा गुह्यं वदस्व मे॥४॥

माधवी- पहले भी मैंने तुम्हारे सुन्दर मुख से विविध तन्त्रों को सुना है। श्रीरुद्रयामल तन्त्र, उत्तरतन्त्र, शक्तियामल तन्त्र तथा अन्य तन्त्रों को भी विस्तार से सुना है। हे प्रिये! मैंने योगसारतन्त्र को भी सुना है; अतः अब और भी गोपनीय तन्त्र को मुझसे कहो॥३-४॥

श्री आनन्दभैरव्युवाच

योगसारं तत्त्वसारं सर्वशास्त्रोत्तमोत्तमम्।
प्रधानं सर्वशास्त्राणां तन्त्रादीनां च भैरव।।५।।
यो न जानाति तत्त्वेन तस्य सिद्धिर्न जायते।
किं योगसाधनैर्लक्ष्यैः किं वा स्तोत्रसाधनैः।।६।।
किं वा दानादिभिर्लक्ष्यैः किमन्यद्देवयाजनैः।
किं वा तीथादिगमनैः किं वा वश्यादिकर्मभिः।।७।।

माधवी- श्री आनन्दभैरवी ने कहा--हे भैरव! योग का सार 'तत्त्वसार' समस्त शास्त्रों में श्रेष्ठ है। यह सभी शास्त्रों एवं तन्त्रों में प्रधान है। जो तात्त्विक रूप से इसे नहीं जानता, उसे सिद्धि की प्राप्ती नहीं होती है। लाखों प्रकार से योगसाधना करने से या स्तोत्रसाधन करने से या लाखों प्रकार से दान करने से अथवा देवताओं की पूजा करने से या विविध तीर्थों में भ्रमण करने से या वशीकरण आदि कर्मों को करने से भी तत्त्वसार शास्त्र को सम्यक् रूप से जाने विना सिद्धि की प्राप्ति सर्वथा असम्भव है।।५-७।।

किं वीरसाधनैर्लक्ष्यैः किं कुलाचारकर्मभिः।
किं दीक्षामन्त्रतन्त्राद्यैः किमन्यद्ग्रन्थविस्तरैः।।८।।
तत्त्वसारं विना वत्स! तत्सर्वं निष्फलं भवेत्।
पञ्चतत्त्वात्मकमिदं यो विजानाति तत्त्वतः।।९।।
तत्सर्व सफलं तस्य निष्फलं न कदाचन।
तत्त्वसारं विना वत्सः परंब्रह्म न विन्दति।।१०।।

माधवी- अथवा लाखों प्रकार की वीरसाधन करने से, अथवा अनेक प्रकार के कुलाचार का साधन करने से, अथवा दीक्षा साधन करने से, एवं विभिन्न प्रकार के ग्रन्थों को पढ़ने से भी--हे वत्स! 'तत्त्वसार' के विना सब कुछ फलहीन हो जाता है। जो साधक तात्त्विक रूप से इस पञ्चतत्त्वात्मक विश्व को जान लेता है उसकी समस्त क्रियायें सफल हो जाती हैं और कभी भी वे निष्फल नहीं होतीं। हे वत्स! तत्त्वसार के विना "परब्रह्म" का ज्ञान भी नहीं होता ।।८-१०।।

श्री आनन्दभैरव उवाच

तत्त्वसारस्य माहात्म्यं वदस्वानन्द भैरवि!।
विस्तरं तस्य माहत्म्यं प्रधानं कुलभैरवि।।११।।

अनुष्ठानं क्रियाकाण्डं योगकाण्डं च सिद्धिदम्।
केनोपायेन देवेशि! जायते मम निश्चितम्।।१२।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा--हे आनन्दभैरवि! मुझसे तत्त्वसार का माहात्म्य विस्तारपूर्वक कहो। हे कुलभैरवि! तत्त्वसार के प्रमुख माहात्म्य का वर्णन करो। हे देवेशि! अनुष्ठान, क्रिया, योग आदि किस उपाय से मेरा कार्य निश्चित रूप से पूर्ण हो सकता है उस उपाय को मुझसे कहो।।११-१२।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

यत्रास्ते तत्त्वसारज्ञः तत्रास्ते श्रीसदाशिवः।
यथा गङ्गोदकेनापि सर्वं याति पवित्रताम्।।१३।।
तत्त्वज्ञदर्शनादेव तत्प्रयाति पवित्रताम्।
तत्त्वसारस्य माहात्म्यं को वक्तुं भुवनत्रये।।१४।।
वर्णितुं नैव शक्नोमि तद्विधानं हि भैरव!।
संक्षेपात् कथयामीह तच्छृणुष्व महेश्वर!।।१५।।
तत्त्वसारं क्वचिद् दृष्ट्वा देवाः सर्वे मुदान्विताः।
वाञ्छन्ति सर्वदा देवाः शौनकाद्या महर्षयः।।१६।।
पञ्चातत्त्वं च सारं यत्तत्त्वसारं तदुच्यते।
तत्त्वसारज्ञकं दृष्ट्वा हर्षाधिक्यं हि भैरव!।।१७।।
श्वापचो याति पूतत्वं तं दृष्ट्वा मानवादयः।
यस्मिन् ग्रामे महेशान! तत्त्वसारोपतिष्ठति।।१८।।

माधवी- श्री आनन्दभैरवी ने कहा--हे आनन्दभैरव! जिस स्थान में तत्त्वसार का ज्ञाता साधक रहता है उस स्थान में श्री सदाशिव का निवास होता है। जिस प्रकार गंगा जल से समस्त वस्तुयें पवित्र हो जाती हैं उसी प्रकार से तत्त्व के ज्ञाता के दर्शनमात्र से ही पवित्रता हो जाती है। तत्त्वसार के माहात्म्य का वर्णन तीनों लोक में कोई भी नहीं कर सकती। हे भैरव! मैं भी इसके माहात्म्य का वर्णन नहीं कर सकता। मैं संक्षेप में इसका माहात्म्य तुमसे कहती हूँ। हे महेश्वर! श्रवण करो, तत्त्वसारज्ञ के दर्शन की इच्छा देवगण भी सदैव करते रहते हैं। वे उस साधक का दर्शन करके प्रसन्न होते हैं। शौनक आदि महर्षिगण एवं समस्त देवगण अपनी इच्छापूर्ति हेतु सदा उसके दर्शनो के लिए आकुल रहते हैं। जो पञ्चतत्त्व का सार है उसी को तत्त्वसार कहा जाता है। हे भैरव! तत्त्वसारज्ञ को देख कर अत्यन्त प्रसन्न होना

चाहिए; क्योंकि तत्त्वसारज्ञ के दर्शन से चाण्डाल भी पवित्र हो जाता है, अन्य मनुष्यों का तो कहना ही क्या है। हे महेशान! जिस ग्राम में तत्त्वसारज्ञ रहता है।।१३-१८।।

तस्मिन् ग्रामं कुरुक्षेत्रं सर्वक्षेत्रोत्तमोत्तमम्।
यस्मिन् गेहे कुलेशान! तत्त्वसारोऽस्ति यत्नतः।।१९।।
तत्तु गेहं नमस्कृत्य विधाताऽप्यगमद् द्रुतम्।
बहुना किमिहोक्तेन सर्वं वेत्सि कुलेश्वर!।।२०।।
तत्त्वसारोक्तमार्गेण गृह्लीयात् कवचं शुभम् ।
स्तोत्रमन्त्रादिकं सर्वं गृह्लीयात् कुलभैरव!।।२१।।
न गृह्लीयाधदा देव तदा सर्वं विनश्यति।
भैरवेण पुरा प्रोक्तं तन्त्रमन्त्रादिकं तु यत्।।२२।।
तत्त्वसारं विना सर्वं निष्फलं जायते प्रिय!।
तस्माद् यत्नेन देवेश! तेषां शुद्धिर्विधीयते।।२३।।

इति निगमतत्त्वसारे 'तत्त्वसारमाहात्म्यं'
नाम प्रथमः पटलः।।१।।

•••••

माधवी- वह ग्राम कुरुक्षेत्र के समान है और सभी श्रेष्ठ स्थानों में उत्तम है। हे कुलेशान! जिस घर में तत्त्वसारज्ञ यत्न से रहता है उस गृह को नमस्कार करके विधाता भी चले जाते हैं। अधिक कहने से क्या लाभ, हे कुलेश्वर! तुम सब जानते हो। तत्त्वसार द्वारा कहे गये मार्ग से ही कवच, स्तोत्र, मन्त्रादि सभी को ग्रहण करना चाहिए। हे देव! ऐसा न करने से स्तोत्र-मन्त्रादि सब कुछ निष्फल हो जाते हैं। हे प्रिय! हे देवेश!! इसीलिये स्तोत्रमन्त्रादिक सभी की शुद्धि का विधान बताया गया है और उसे अवश्य ही करना चाहिए।।१९-२३।।

निगमतत्त्वसार की प्रथम पटल की अजय कुमार
उत्तमलिखित 'माधवी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई।

++++

अथ द्वितीयः पटलः

ब्रह्मतत्त्वमाहात्म्यम्

*****

श्री आनन्दभैरव उवाच

वद कान्ते! निगूढं मे सारज्ञानं कुलेश्वरि!।
मन्त्रादिसाधनं सर्वं तथा स्तोत्रादि साधनम्।।१।।
पञ्चवाच्वत्मकं सर्वं योगज्ञानं तथा प्रिये!।
पञ्चतत्त्वादिशुद्धिं च वद कान्ते कुलेश्वरि!।।२।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा--हे कान्ते! हे कुलेश्वरि! निगूढ़ गुप्त विषय एवं सारज्ञान को मुझसे कहो। मन्त्रादि साधन, स्तोत्रादि साधन, पञ्चवायुपरक सम्पूर्ण योगज्ञान तथा हे प्रिये! पञ्चतत्त्वादि का शोधन भी मुझसे कहो।।१-२।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

शृणु शङ्कर! वक्ष्यामि सारज्ञानं च मुक्तिदम्।
येन विज्ञानमात्रेण परंब्रह्म प्रविन्दति।।३।।
ब्रह्मानन्दमयं सर्वं यदि जानाति तत्त्वतः।
तदा मुक्तिमवाप्नोति यदि ब्रह्म प्रविन्दति।।४।।
आब्रह्मस्तम्भपर्यन्तं परंब्रह्माणि संस्थितम्।
सैव काली महामाया शक्तिरूपा जगन्मयी।।५।।
सत्त्वादिगुणसम्भूता एका सा द्विविधा स्मृता।
वामे प्रकृतिरूपा सा सदा च तिष्ठतीश्वरी।।६।।

माधवी- श्री आनन्दभैरवी ने कहा-- हे शङ्कर! मैं मुक्तिप्रदायक उस सारज्ञान को कहती हूँ, जिसके जानने मात्र से परब्रह्म का भी ज्ञान हो जाता है; आप इसे श्रवण करें। यदि साधक तत्त्व रूप से सबको ब्रह्मानन्दमय जानता है तो वह मुक्ति प्राप्त कर लेता है। ब्रह्मज्ञान होने पर निश्चित ही मुक्ति प्राप्त हो जाती है। ब्रह्म से लेकर स्तम्भ तक सभी में परब्रह्म स्थित है। वही परब्रह्म काली, महामाया, शक्तिरूपा जगन्मयी है। वही सत्त्वादि गुणों से उत्पन्न होकर एक होती हुई भी दो जानी जाती है। वाम भाग में वही प्रकृतिरूपा होकर सदास्थित रहती है।।३-६।।

दक्षे पुरुषरूपेण परंब्रह्म च तिष्ठति।
ह्रस्वदीर्घक्रमेणैव तौ जानीतः सदा सुधीः।।७।।
कामेच्छया तेन कृतः प्रकृत्या सह सङ्गमः।
पशौ प्रकृतिमाश्रित्य स्वयं कामं करोति हि।।८।।
पुमान् प्रकृतिमाश्रित्य चेन्द्रियार्थं करोति यत्।
तत्सर्वं ब्रह्मलीलैव सर्वथा ब्रह्मणा कृतम्।।९।।
लीलया ब्रह्मणः सर्वं हास्यकौतूहलादिकम्।
सर्वं ब्रह्ममयं ज्ञात्वा सर्वकर्माणि साधयेत्।।१०।।

माधवी- दक्षिण भाग में पुरुषरूप से स्थित रहती है। ब्रह्म एवं काली तथा इन दोनों को ह्रस्व एवं दीर्घक्रम से बुद्धिमान साधक जानता है। वही ब्रह्म काम की इच्छा से प्रकृति के साथ संगम करता है और वही पशु बनकर प्रकृति के आश्रय से कामभोग करता है। पुरुष प्रकृति के द्वारा जो भी इन्द्रियभोग करता है वह सब ब्रह्म की ही लीला होती है। सब कुछ ब्रह्म के द्वारा ही होता है। इसलिये हास्य एवं कौतूहल आदि सभी को ही ब्रह्ममय जानकर समस्त कार्यों का साधन करना चाहिये।।७-१०।।

ब्रह्मखेला जगत् सर्वं दोषादोषं न चाचरेत्।
दोषोऽस्ति ब्रह्मणः सर्वं गुणमेव च तस्य तु।।११।।
नृत्यगानादिकं सर्वं इन्द्रजालिकवत् प्रिये!।
खेलार्थं च परंब्रह्म साकारोऽस्ति कुलेश्वर!।।१२।।
वामांशं प्रकृतिरूपं दशांशश्च पुमान् स्वयम्।
तयोः संयोगमात्रेण शरीरं जायते ध्रुवम्।।१३।।
तदिच्छया भोजनादिः सर्वं भवति निश्चितम्।
पीयते खाद्यते यत्तत् सद्ब्रह्मैव समर्पणम्।।१४।।
सुखेच्छाऽपि च दुःखेच्छा परब्रह्मैव कारणम्।
दिव्ये शरीरं सोऽप्यस्ति तथा कीटादिकेषु च।।१५।।

माधवी- यह सम्पूर्ण जगत् ब्रह्म की ही क्रीड़ा है। इसमें दोष-अदोष का विचार नहीं करना चाहिये। जो दोष है वह भी ब्रह्म है एवं जो गुण है वह भी ब्रह्म

है। हे प्रिय! नृत्य, गीतादि सभी इन्द्रजालवत् ब्रह्म ही हैं। हे कुलेश्वर! क्रीड़ा के लिये ही ब्रह्म साकार रूप धारण करता है। वामांश प्रकृतिरूप है एवं दक्षांश पुरुषरूप। इन दोनों रूपों के मिलन से शरीर निर्मित होता है। उस शरीर में भोजनादि जो कुछ भी है, वह सब ब्रह्म की इच्छा से ही होता है। वह जो कुछ खाता-पीता है वह सब ब्रह्म को ही समर्पित होता है। सुख एवं दुःख की इच्छा का कारण भी ब्रह्म ही है। वही ब्रह्म दिव्य शरीर में भी रहता है और कीटादि योनियों में भी रहता है। ।।११-१५।।

पीत्वा मोहमदिरां च उन्मत्तवच्च पुमान् सः।
शक्तेर्मायामुपाश्रित्य सो पुं मत्तो भवेद् ध्रुवम्।।१६।।
देवरूपं समाश्रित्य दिवि क्रीडति देववत्।
पशुरूपं समाश्रित्य पशुबलिं चरेद् भुवि।।१७।।
मानुषीं देहमाश्रित्य सुखमोहं च कांक्षति।
गुणत्रयं समाश्रित्य प्रदीपेऽप्यस्ति भैरव।।१८।।
अस्य सन्नाशनार्थाय यमरूपो धरो यतः।
मूलप्रकृतिमाश्रित्य देहिनां देहनाशकृत्।।१९।।
धनिनां धननाशाय तस्य रूपधरो व्ययः।।२०।।

माधवी- मोह-मदिरा का पान करके वही ब्रह्म उन्मत्त के समान बना रहता है। यह निश्चित है कि वह शक्ति की माया से ही आश्रित होकर उन्मत्त बनता है। देवरूप का आश्रयणकर वही स्वर्ग में क्रीड़ा करता है एवं पशुरूप धारण करके पृथ्वी पर पशु-बलि को चरितार्थ करता है, मानुषी देह धारण करके सुख एवं मोक्ष की आकांक्षा करता है तथा सत्त्व, रज एवं तम का आश्रयण कर वही समयानुकूल कार्य करता है। उसके विनाश के लिये वही यम रूप धारण करता है। मूल प्रकृति का आश्रय लेकर वह एक शरीर द्वारा दूसरे शरीर का नाश करता है। धनिकों का नाश करने के लिये वह ब्रह्म ही 'व्यय' नाम को धारण करता है।।१६-२०।।

पाषाणमणिधातुषु रसरूपो व्यवस्थितः।
द्रववत्सा जलेऽप्यस्ति वृक्षेष्वस्ति तु तेजवत्।।२१।।
जलजं रूपमाश्रित्य जले क्रीडति सर्वथा।
क्वचिच्छोकादिव्याक्लान्तःक्वचित्सौख्यादिसङ्कुलः।।२२।।

क्वचिद्धास्यादिसंयुक्तो नानारूपधरः स्मृतः।
तेषां च ब्रह्मलीलैव ज्ञात्वा कर्माणि साधयेत्।।२३।।

माधवी- पाषाण, मणि व धातुओं में वही रसरूप होकर स्थित रहता है द्रवरूप है। द्रवरूप से वही जल में रहता है। वृक्षों में तेजरूप से रहता है और जलजरूप में आश्रित होकर वही जल में क्रीड़ा करता है। वह कहीं पर शोक से व्याकुल रहता है तथा कहीं पर सुख से प्रसन्न रहता है एवं कहीं पर हास्य आदि से संयुक्त रहता है। इस तरह अनेक प्रकार के रूपों से वह जाना जाता है। इन सब को ब्रह्म की क्रीड़ा जानकर ही कर्मसाधन करना चाहिये।।२१-२३।।

निर्मोही निरहङ्कारस्सादा ज्योतिर्मयः स्मृतः।
कामिनीरूपमाश्रित्य कामिनीनां कलेवरे।।२४।।
कामोन्मत्तः कामवते परब्रह्मैव सर्वथा।
मादनं रूपमाश्रित्य पुमांश्च विह्वलायते।।२५।।

माधवी- ब्रह्म मोहरहित, अहंकारहीन एवं सदा ज्योतिर्मय है। कामिनी अर्थात् सुन्दर नारी का रूप धारण करके वही कामी पुरुषों को भ्रमित करता रहता है। काम से उन्मत्त होकर वही स्त्रियों के साथ लीला किया करता है एवं कामरूप धारण करके वही पुरुषों को व्याकुल करता रहता है।।२४-२५।।

ब्रह्मरूपो विष्णुरूपो रुद्ररूपश्च एव हि।
गुरुरूपं समाश्रित्य लोकान् सन्त्रायते अघात्।।२६।।
ऊर्ध्वशून्ये गतिस्तस्य मध्यशून्यस्थितः स्मृतः।
शून्यान्ते क्रीडति ब्रह्म को विजानाति तत्त्वतः।।२७।।

माधवी- वह ब्रह्म ही ब्रह्मा है, विष्णु है, रुद्र है। वही गुरु का रूप धारण करके विश्व का पाप एवं पतन से उद्धार करता है। ऊर्ध्वशून्य में भी उसकी गति है। मध्य शून्य में भी वह स्थित रहता है एवं शून्य के अन्त में भी वह क्रीड़ा करता रहता है। उस ब्रह्म को तात्त्विक रूप से जानने में कौन समर्थ हो सकता है?।।२६-२७।।

ऊर्ध्वशून्यं ब्रह्मरन्ध्रं भ्रुवोर्मध्ये च मध्यमम् ।
मूलाधारमधःशून्यं त्रयमेतत् प्रकीर्त्तितम् ।।२८।।
शून्योर्ध्वं यदा गच्छेत्तदा स्वप्नादिकं भवेत्।

मध्यशून्यं यदा गच्छेत्तदा ज्ञानादिकं भवेत्।।२९।।
अधःशून्यं यदा गच्छेत्तदा कामादिकं भवेत्।
ऊर्ध्वशून्याद्यदा मध्यं गच्छति सः महेश्वरः।।३०।।
तदा क्रीड़ादिकं सर्वं स करोति न चान्यथा।
ऊर्ध्वशून्याद्यदा चाधः स गच्छति तदा शृणु।।३१।।

माधवी- ऊर्ध्वशून्य ब्रह्मरन्ध्र है, मध्यशून्य भ्रूमध्य है एवं मूलाधार अधःशून्य है। यह तीन ही शून्य जाने जाते हैं। जब ब्रह्म शून्य के ऊर्ध्व में जाता है तब स्वप्नादि होते हैं। जब वही ब्रह्म मध्यशून्य में जाता है तब ज्ञानादिक होते हैं एवं जब अधःशून्य में जाता है तब कामादि चेष्टायें होती हैं। हे महेश्वर! ऊर्ध्वशून्य से ब्रह्म जब 'मध्य शून्य' में जाता है। तभी उसमें क्रीड़ादिक भाव उत्पन्न होते हैं, अन्यथा नहीं। अब ऊर्ध्वशून्य से ब्रह्म जब अधःशून्य में जाता है तब की स्थिति सुनो।।२८-३१।।

क्षुधा तृष्णाऽऽदिकं सर्वं तदैव हि करोति सः।
स्वप्नच्छलेन ब्रह्मण्डं स गच्छति महानिशि।।३२।।
गृहे गृहे च गन्तव्यं क्रीडार्थं परमो गुरुः।
यदा गच्छेद्वायुरूपं तदा सर्वं तु क्रूरवत्।।३३।।
आदिमध्यं यदा याति तदा निद्रां प्रयात्यहो।
यदा चेन्नासिकारन्ध्रं स गच्छति महेश्वर!।।३४।।

माधवी- तब क्षुधा, तृष्णा आदि समस्त क्रियायें होती हैं। स्वप्न-छल से वह जब ब्रह्माण्ड में जाता है तब महारात्रि हो जाती है। वह परम गुरु ही घर-घर में क्रीड़ा हेतु जाता है। जिस समय वह वायु रूप हो जाता है उस समय उसमें क्रूर भाव उत्पन्न हो जाता है और आदि-मध्य में जब जाता है तब निद्रा भाव उत्पन्न हो जाता है। हे महेश्वर! वह जब नासिका रन्ध्र में जाता है।।३२-३४।।

मलं च कृमिकीटाद्यैर्महाक्लेशादिसङ्कुलैः।
कृमिरूपं समाश्रित्य सोऽपि तिष्ठति सर्वदा।।३५।।
त्वां मां रूपेऽभेदरूपमाश्रित्य कुलभैरव!।
स तिष्ठति परब्रह्म लीलया तु स्वमिच्छया।।३६।।
घटादौ शून्यरूपं च पटादौ विह्वलादिकम्।

धर्मादिकाममोक्षार्थमागमे च वितिष्ठति।।३७।।
क्रियार्थं वेदशास्त्रेषु योगार्थं योगकर्मणि।
तर्कार्थं तर्कशास्त्रेषु निगमेषु निरूपणम्।।३८।।
व्याकरणेऽपि बुद्ध्यर्थं परब्रह्मैव तिष्ठति।
कुलशास्त्रं कुलाचारे आगमान्निगमः कृतः।।३९।।

माधवी- तब मल, कृमि, कीट आदि से युक्त होकर महाक्लेशवान हो जाता है और वह कृमिरूप में सदा वहीं स्थित रहता है। हे कुलभैरव! मेरे और तुम्हारे रूप में अभेद देखने वाले साधक ब्रह्म में स्थित रहते हैं, क्योंकि यह विश्व उसी की लीला है। अपनी इच्छा से वही ब्रह्म घटादिक में शून्य रूप से और पटादि में विह्वलाकृतिरूप से ही रहता है। वही ब्रह्म धर्म, अर्थ, काम व मोक्षार्थी बनकर आगम में रहता है, क्रिया बनकर वेदशास्त्रों में तथा तर्क विचार के लिये तर्कशास्त्र में रहता है। निरूपण के लिये ब्रह्म निगम में रहता है। बुद्धि के लिए व्याकरण शास्त्र में स्थित रहता है एवं कुलाचार में स्थित होकर कुलशास्त्रों तथा आगम-निमदिकों का वही निर्माण भी करता है।।३५-३९।।

अस्त्रादौ तेजरूपेण स्वयं ब्रह्मैव तिष्ठति।
एवंविधानि रूपाणि स्त्रीरूपाण्यथ भैरव!।।४०।।
वितिष्ठति परंब्रह्म स्वेच्छया लीलयाऽपि च।
आद्येच्छया कृतं कर्म दोषादोषं न चाचरेत्।।४१।।

माधवी- स्वयं ब्रह्म ही अस्त्र आदि में तेजरूप से स्थित रहता है। इस प्रकार से अनेक रूपों के साथ-साथ स्त्रीरूपों को भी उस ब्रह्म ने धारण किया है। हे भैरव! वह ब्रह्म स्वयं की इच्छा से सर्वव्यापक है। इसलिए साधक को चाहिए कि अपने समस्त कर्मों का निवेदन ब्रह्म को ही करे। किसी भी कर्म में दोष-अदोष की भावना न लाये।।४०-४१।।

ब्रह्मरूपमिदं सर्वं ब्रह्मरूपं जगन्मयम्।
ब्रह्मरूपमिदं योषिद् ब्रह्मरूपं कुलाकुलम्।।४२।।
ब्रह्मपानं ब्रह्मरूपं ब्रह्मज्ञानात्मकं स्मृतम् ।
ब्रह्मानन्दमयं सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् ।।४३।।

माधवी- यह समस्त जगत ब्रह्ममय है। वह ब्रह्म जगन्मय है यह स्त्री ब्रह्मरूप है। यह 'कुलाकुल' ब्रह्मरूप है। कुल देवी एवं अकुल ब्रह्म है। दोनों ही ब्रह्मस्वरूप हैं। ब्रह्मपान ब्रह्मरूप है। ब्रह्म को ज्ञानात्मक कहा गया है। इस प्रकार स्थावर एवं जङ्गमरूप यह समस्त जगत् ब्रह्मानन्दमय है।।४२-४३।।

स्त्रियश्चापि ब्रह्मरूपं वीरो ब्रह्मप्रदायकः।
स्त्रीमयं च ब्रह्मरूपं ब्रह्मरूपं कुलामृतम्।।४४।।
कुलाचार्यं ब्रह्मरूपं कुलाकुलं गुरुं स्मृतम्।
मांसं मत्स्यं मैथुनं च मद्यमुद्रादिकं च यत्।।४५।।
सर्वं ब्रह्ममयं देव! ब्रह्मवदाचरेत् सदा।
कुलाकुलं ब्रह्मरूपं ब्रह्मयज्ञानकं स्मृतम्।।४६।।
मच्छरीरं ब्रह्मरूपं ब्रह्मतेजः प्रपूजितम्।।४७।।

माधवी- स्त्री भी ब्रह्मरूप है एवं वीर भी ब्रह्मरूप है। ब्रह्मरूप स्त्रीमय है एवं कुलामृत भी ब्रह्म है। कुलाचार्य भी ब्रह्मरूप है। मद्य, मांस, मत्स्य, मैथुन एवं मुद्रा भी ब्रह्मरूप हैं। सभी ब्रह्ममय हैं। इसलिए हे देव! सबके साथ ब्रह्मवत् ही आचरण करना चाहिए। कुलाकुल ब्रह्मरूप ब्रह्मज्ञान को देने वाला है। मेरा शरीर ब्रह्मरूप है एवं ब्रह्मतेज से पूरित एवं पूजित है।।४४-४७।।

तन्त्रमन्त्रादिस्तोत्रादिः ब्रह्मरूपाणि भैरव!।
ज्ञानात्सिद्धिमवाप्नोति अज्ञानान्न च सिद्धिभाक्।।४८।।
ब्रह्मज्ञानमिदं वत्स! यो न जानाति तत्त्वतः।
ध्यानपूजादिकं सर्वं तस्य सिद्धिर्न जायते।।४९।।
ब्रह्मतत्त्वं विना सर्वं असिद्धेः कारणं स्मृतम्।
अतएव महेशान! कलौ सिद्धिर्न जायते।।५०।।
सिद्धेर्हि कारणं ब्रह्म सर्वथैव कुलेश्वर!।
यो हि जानाति तत्त्वेन सोऽप्यन्ते ब्रह्मभाग्भवेत्।।५१।।

इति निगमतत्त्वसारे 'ब्रह्मतत्त्वमाहात्म्यं'
नाम द्वितीयः पटलः॥२॥

◆◆◆◆◆

माधवी- हे भैरव! तन्त्र-मन्त्र-स्तोत्रादि सभी ब्रह्मरूप हैं। ज्ञान से सिद्धि प्राप्त होती है एवं अज्ञान से असिद्धि। हे वत्स! इस ब्रह्मज्ञान को जो साधक तत्त्व से नहीं जानते हैं उनके ध्यान-पूजादि कार्य सिद्ध नही होते हैं। ब्रह्मतत्त्व के विना सभी कुछ असिद्ध ही कहा गया है। हे महेश्वर! इसलिए कलियुग में सिद्धि की नहीं प्राप्ति होती, क्योंकि सिद्धि का मूल कारण ब्रह्म ही है। हे कुलेश्वर! जो साधक तत्त्व से ब्रह्म को जान लेता है, वही ब्रह्म को प्राप्त करपाता है।।४८-५१।।

निगमतत्त्वसार की द्वितीय पटल की अजय कुमार
उत्तमरचित 'माधवी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई।

✦✦✦✦✦

अथ तृतीयः पटलः

मन्त्रशोधनम्

◆◆◆◆◆

श्री आनन्दभैरव उवाच

अपरं वद मे कान्ते! मन्त्रादिसाधनं प्रिये।।
श्रोतुमिच्छामि देवेशि! कृपया मे प्रकाशय।।१।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा हे कान्ते! हे प्रिये! अब अन्य मन्त्रादि साधन को भी मुझसे कहो। हे देवेशि! उन्हें सुनने की मेरी तीव्र इच्छा है। कृपया मेरे प्रति उनका उपदेश करो।।१।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

श्रृणु देवेश! वक्ष्यामि मन्त्रादिसाधनं महत्।
येनानुष्ठितमात्रेण साक्षाद् योगीश्वरो भवेत्।।२।।
मन्त्रादिसाधनं सर्वं श्रृणुष्व कमलासुत।
विधिवद् गुरुवक्त्राच्च गृह्णीयान् मन्त्रमुत्तमम्।।३।।
पुरश्चर्यां ततः कृत्वा नियमेन यथाविधिः।
ततः स्वर्णपटीं कृत्वा तन्मध्ये मन्त्रमालिखेत्।।४।।
ततो रौप्येन सम्वेष्ट्य ततः पूजोपहारकैः।
ताम्रपात्रेषु संस्थाप्य लेपयेद् रक्तगन्धकैः।।५।।

ततश्च सिन्दुरेणापि चतुर्दिक्षु कुलेश्वरि!।
नवनाभं तु संलेख्य तस्योपरि प्रपूजयेत्।।६।।

माधवी- हे देवेश! मैं वह महत्त्वपूर्ण मन्त्रसाधन आपसे कहती हूँ, जिसके अनुष्ठान मात्र से ही साधक साक्षात् योगीश्वर हो जाता है। हे कमलासुत! सम्पूर्ण मन्त्रादि साधन मैं कहती हूँ, सुनिये। श्रीगुरुमुख से विधिपूर्वक मन्त्र ग्रहण करने के पश्चात् यथाविधि नियमपूर्वक उसका पुरश्चरण करे। उसके उपरान्त स्वर्णपटी को चांदी से वेष्टित करे। तदनन्तर पूजनोपहार से उसका पूजन करे और उसे एक ताम्रपात्र में स्थापित कर उस पर लाल चन्दन का लेप करे। हे कुलेश्वर! इसके पश्चात् सिन्दूर से 'नवनाभ' चक्र बना कर उस पर पूजन करे।।२-६।।

ततो यजेदिष्टविद्यां यथोक्तविधिना शिव!।
यथाशक्ति ततो जप्त्वा समर्पणविधिं चरेत्।।७।।
मातृकार्णं विन्दुयुक्तं समुच्चार्य मनुं स्मरेत्।
मन्त्रेणान्तरितां कृत्वा मातृकाँस्तान् सविन्दुकान्।।८।।
तेनैव मनुना देव! धृष्ट्वा ताम्रशलाकया।
आदिबीजं समुच्चार्य मनुं मन्त्री विताड़येत्।।९।।

माधवी- हे शिव! पूजनोपरान्त इष्ट देवता का यथाविधि पूजन करे तथा यथाशक्ति मन्त्र का जप करने के पश्चात् जपफल का समर्पण करे। विन्दुयुक्त मातृका वर्णों का उच्चारण करते हुये इष्ट मन्त्र का स्मरण करे। तदुपरान्त मन्त्र से सम्पुटित करके विन्दुयुक्त मातृकाओं का उच्चारण करे। इसके पश्चात् मन्त्र को ताम्रशलाका से लिखे तथा आदिबीज "ॐ" का उच्चारण करते हुये मन्त्र को विताड़ित करे।।७-९।।

मायालक्ष्मी पदाद्येन पुटयित्वा शतं जपेत्।
कूर्चबीजं समुच्चार्य धूपयेद् बहुयत्नतः।।१०।।
वाग्भवं तु समुच्चार्य कुलदीपेन दीपयेत्।
ततो वै कुलगन्धेन क्षालयेत् कामराजतः।।११।।
ततः कुलजलेनापि अस्त्रेण चाभिषेचयेत्।
ततो वै मातृकार्णेन पुटं कृत्वा जपेन्मनुम्।।१२।।
ततश्च प्रजपेद् धीमान् मनुं लक्ष्यं समाहितः।
कुलामृतं ततः पीत्वा वायुबीजेन ताडयेत् ।।१३।।

माधवी- माया (ह्रीं) लक्ष्मी (श्रीं) का उच्चारण करते हुये मन्त्र को सम्पुटित कर उसका शत (१००) बार जप करे। कूर्च बीज (हूँ) का उच्चारण कर उसे धूपित करे।

इसके अनन्तर विधिपूर्वक वाग्भव (ऐं) का उच्चारण कर मन्त्र को 'कुलदीप' से दीपित करे। तदनन्तर कामबीज (क्लीं) का उच्चारण कर उस पर "कुलगन्ध" का लेप करे। तत्पश्चात् अस्त्रबीज (फट्) का उच्चारण कर "कुलजल" से उसका अभिषिंचन करे। तब मातृकावर्णों से उसे पुटित करके मन्त्रवर्णों का एक लाख बार जप करे। इसके उपरान्त समाहित होकर 'कुलामृत' का पान कर वायुबीज (यं) से उसका ताड़न करे।।१०-१३।।

योनिक्षालिततोयेन लिङ्गप्रक्षालनेन च।
अभ्यर्च्य देवदेवेशीं शतवारं प्रतर्पयेत्।।१४।।
ततः सावहितो मन्त्री गुरुं नत्वा शिरःस्थितम्।
ब्रह्मरन्ध्रे तु तन्मन्त्रं नयेत् संहारमुद्रया।।१५।।
तत्र तद्दिवसे रात्रौ नारीयोगे कुलेश्वर!।
जप्त्वा सिद्धिमवाप्नोति सर्वथैव प्रयत्नतः।।१६।।

माधवी- योनि और लिङ्ग को धोये हुए जल से पूजन कर देवदेवेशी का शत बार (१००) तर्पण करे। तत्पश्चात् साधक सावधान होकर शिरस्थित श्री गुरुदेव को प्रणाम करे और ब्रह्मरन्ध्र में संहारमुद्रा से मूल मन्त्र का विसर्जन करे। उस दिन रात्रि में शक्तियुक्त होकर हे कुलेश्वर! इष्टमन्त्र का प्रयत्नपूर्वक यथाशक्ति जप करने से साधक सभी प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त कर लेता है।।१४-१६।।

इति ते कथिता देव! मन्त्रसिद्धिरनुत्तमा।
असाध्यं यदि गृह्णीयात्तदा नैव फलं लभेत् ।।१७।।
एतत्तु क्रमयोगेन मन्त्र सिद्धिः प्रजायते।
तस्मिन् स्वर्णेन कवचं कृत्वा कर्णे विधारयेत्।।१८।।
एतत् प्रत्यक्षफलदो मन्त्रो भवति शङ्कर!।
योषिद्रूपमाश्रित्य छायायां मण्डपालये।।१९।।
मां पश्यति साधकेन्द्रः सर्वथैव कुलेश्वरः।।२०।।

इति निगमतत्त्वसारे "मन्त्रशोधनं"
नाम तृतीयः पटलः॥३॥

माधवी- हे देव! इस प्रकार मन्त्रसिद्धि के जो व्यक्ति उपर्युक्त प्रकार से साधना करने में समर्थ नहीं है वह यदि इसे ग्रहण करता है तो उसे मन्त्रे की सिद्धि नहीं होती। इस निकृष्ट उपाय मैंने आपसे कहा। हे शिव! इस उपर्युक्त क्रमयोग से ही मन्त्र की सिद्धि होती है। उस मन्त्र को स्वर्ण पटी का कवच बनाकर उसे कान में

धारण करना चाहिए। यह प्रत्यक्ष फल को देने वाला मन्त्रविधान है। हे शङ्कर! हे कुलेश्वर! स्त्रीरूप धारण करके मन्दिरों के भीतर छाया में साधक मेरा ही दर्शन प्राप्त करता है।।१७-२०।।

निगमतत्त्वसार में तृतीय पटल की अजय कुमार
उत्तमरचित 'माधवी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई।

+++++

अथ चतुर्थः पटलः

स्तोत्रशोधनम्

+++++

श्री आनन्दभैरव उवाच

अपरं श्रोतुमिच्छामि स्तोत्रादिशोधनं प्रिये।।
तदुपायं वद प्रौढे! यदि तेऽस्ति कृपा मयि।।१।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा हे प्रिये! हे प्रौढे! मैं स्तोत्रादि शोधन की अन्य विधियों को सुनना चाहता हूँ। यदि तुम्हारी मेरे ऊपर कृपा है तो शोधन के उन उपायों का वर्णन करो।।१।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

शृणु वक्ष्यामि देवेश! स्तोत्राणां शोधनं प्रिय!।
यं विना विफलं सर्वं तदुपायं शृणुष्व मे।।२।।
आदौ विद्यां समाहूय शास्त्रोक्तवर्त्मना लिखेत्।
संलिखेत् तालपत्रे तु भूर्जपत्रे च वा पुनः।।३।।

माधवी-हे देवेश! हे प्रिय! सुनो, मैं स्तोत्रशोधन की वह विधि कहती हूँ जिसके विना सभी स्तोत्र निष्फल हो जाते हैं। सर्वप्रथम शास्त्रोक्त मार्ग से विद्या का आवाहन कर शास्त्रोक्त मार्ग से उसे तालपत्र या भोजपत्र पर उल्लिखित करना चाहिए।।२-३।।

अन्यपत्रं प्रयुञ्जीत निष्फलं जायते हर!।
श्रीगुरुः प्रलिखेत् स्तोत्रं तदा सर्वं सुदुर्लभम्।।४।।

सूरिभिर्पत्रं लिखितं विरलाक्षरसंयुतम्।
तत्सर्वं निष्फलं याति शिलायां मुक्तबीजवत्।।५।।
तेजं विना यथा लौहं विना शक्तिं यथा शिवः।
शृङ्गं विना यथा वत्सः सर्वमेवं प्रकीर्तितम्।।६।।

माधवी- हे हर! अन्य पत्र पर लिखने से फल नहीं प्राप्त होता। श्रीगुरु द्वारा लिखित स्तोत्र सभी को सदा ही दुर्लभ हैं, मनीषियों द्वारा पत्र पर लिखित एवं अमूल्य अक्षरों से युक्त भी रहे तब भी अन्य द्वारा लिखित स्तोत्र निष्फल ही होता है। जिस प्रकार पत्थर पर बीज बोने पर अंकुर नहीं निकलता और तेज के विना जिस प्रकार अस्त्र, शक्ति के विना शिव एवं सींग के विना जैसे बैल व्यर्थ होते हैं अर्थात् उनकी कोई शोभा नहीं होती। उसी प्रकार शोधन विना के स्तोत्र भी व्यर्थ ही होते हैं।।४-६।।

तस्मादादौ महेशान! स्तोत्रादिशोधनं चरेत्।
तत्प्रयोगं प्रवक्ष्यामि शृणुष्वानन्दभैरव!।।७।।
पट्टडोरेण संवेष्ट्य मध्ये स्वर्णशलाकया।
अथवा ताम्ररौप्येण दद्याच्छलाकमुत्तमम्।।८।।
लौहं कांस्यं तथा रौप्यं शैसकं दारुनिर्मितम् ।
शलाकं वर्जयेन्मन्त्री स्तोत्रशोधनकर्मणि।।९।।
ताम्रपात्रे कुंकुमाद्यैर्मातृकायन्त्रमालिखेत्।
तन्मध्ये स्थापयेत्स्तोत्रं पञ्चगव्येन शोधयेत्।।१०।।
अभ्युंक्ष्य पञ्चमैस्तत्त्वैः कुलमुद्रां प्रदर्शयेत्।
ततो ध्यायेत् स्तोत्रराजं शृणुष्वानन्दभैरव!।।११।।

माधवी- अतः हे महेशान्! सर्वप्रथम स्तोत्रादि का शोधन करे। उस प्रयोग को मैं कहूंगी। हे आनन्दभैरव! सुनिये, सर्वप्रथम पट्ट (रेशम) के धागे से लपेट कर मध्य में स्वर्णशलाका अथवा ताम्र या रौप्य की शलाका (छड़) रखे। लौह, कांस्य, रौप्य, जस्ता एवं काष्ठ का छड़ स्तोत्रशोधन कर्म में वर्जित है। ताम्रपात्र में कुंकुमादि द्रव्यों से मातृका यन्त्र लिखे। उस यन्त्र के मध्य में लिखा हुआ स्तोत्र रखे। पञ्चगव्य से उसका शोधन करे। तत्पश्चात् मद्य मांस, मत्स्य, मैथुन व मुद्रा से उसका अभ्युंक्षण कर कुलमुद्रा (योनि) का प्रदर्शन करे। तत्पश्चात् स्तोत्रराज का ध्यान करे। हे आनन्दभैरव! सुनिये।।७-११।।

उद्यदादित्यसङ्काशं स्तोत्रं परमदुर्लभम्।
देवानां तुष्टिदं स्तोत्रं ममाभीष्टफलप्रदम्।।१२।।
इति ध्यात्वा स्तोत्रराजं ततो यजेत् समाहितः।
गन्धपुष्पादिभिर्द्रव्यैः नानाबल्युपहारकैः।।१३।।
मायालक्ष्मीप्रदानाय स्तोत्राय च नमो नमः।
मन्त्रेणानेन देवेश! स्तोत्रराजं प्रपूजयेत्।।१४।।
यथोक्तविधिना मन्त्री ततः स्वेष्टमनुं जपेत्।
ततो यजेत् कुलगुरुं कुलदेवीं कुलेश्वरीम्।।१५।।

माधवी- उदयकालीन सूर्य के सदृश प्रकाशमान यह स्तोत्र परम दुर्लभ है। यह स्तोत्र देवताओं को प्रसन्न करने वाला एवं मेरे अभीष्ट को प्रदान करने वाला है। इसका ध्यान करके गन्धपुष्पादि द्रव्यों से एवं विविध प्रकार की बलि एवं उपहारों द्वारा स्तोत्र का पूजन करे। माया (ह्रीं), लक्ष्मी (श्रीं) व स्तोत्राय नमो नमः इस प्रकार 'ह्रीं श्रीं स्तोत्राय नमो नमः' मन्त्र से स्तोत्रराज की पूजा करे तथा यथोक्त विधान से साधक अपने इष्ट मन्त्र का जप करे, तदुपरान्त कुलगुरु एवं कुलदेवी कुलेश्वरी का पूजन करे।।१२-१५।।

श्मश्रुबीजत्रयं चोक्त्वा स्थापयेद् बहुयत्नतः।
चन्दनागरुपुष्पाद्यैर्मायाबीजेन लेपयेत्।।१६।।
कामत्रयं समुच्चार्य रक्तवस्त्रेण वेष्टयेत्।
वेदाद्यं च त्रयं चोक्त्वा स्थापयेद् बहुयत्नतः।।१७।।
ततः प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कारं कृतं बहु।
ॐ नमः स्तोत्रराजाय नमस्ते ज्ञानद प्रभो!।।१८।।
धर्मार्थकाममोक्षं च देहि मे ब्रह्मरूपधृक्।
इत्यनेन नमस्कृत्य स्तोत्रराजं पठेत् सुधीः।।१९।।
ततश्च दक्षिणां दद्याद् गुरवे विभवावधि।।२०।।

इति श्रीनिगमतत्त्वसारतन्त्रे स्तोत्रशोधनं
नाम चतुर्थः पटलः।।४।।

माधवी- यत्नपूर्वक तीन श्मश्रु बीजों (हूँ हूँ हूँ) का उच्चारण कर शोधित स्तोत्रराज को स्थापित करे। चन्दन, अगरु एवं पुष्पादि से माया (ह्रीं) का उच्चारण कर लेपन करे। तीन कामबीजों (क्लीं, क्लीं, क्लीं) का उच्चारण कर उसे रक्त वस्त्र से वेष्टित करे। तीन वेदाद्य बीजों (ॐ ॐ ॐ) का उच्चारण कर उसे स्थिर करे। इसके पश्चात् प्रदक्षिणा कर कई बार नमस्कार करे तथा निम्न मन्त्र का पाठ करे-

ॐ नमः स्तोत्रराजाय नमस्ते ज्ञानद प्रभोः।

धर्मार्थकाममोक्षं च देहि मे ब्रह्मरूपधृक्!।।

अर्थात् स्तोत्रराज को नमस्कार है। हे ज्ञान के देने वाले, हे प्रभो! आपको अनेक बार नमस्कार है। हे ब्रह्मरूपधारी! आप मुझे धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष प्रदान करें।

इस प्रकार नमस्कार कर साधक स्तोत्रराज का पाठ करे। इसके पश्चात् श्रीगुरुदेव को जितनी हो सके उतनी गुरुदक्षिणा प्रदान करे।।१८-२०।।

श्रीनिगमतत्त्वसारतन्त्र में अजय कुमार उत्तमरचित

चतुर्थ पटल की माधवी हिन्दी टीका पूर्ण हुई।

++++++

अथ पञ्चमः पटलः

कवचसाधनम्

•••••

श्री आनन्दभैरव उवाच

अपरं वद मे कान्ते! साधनं कवचं महत्।

यथा स्तोत्रं तथा देवि! कृपया मे प्रकाशय।।१।।

माधवी-हे कान्ते! अब कवच का अन्य महत्त्वपूर्ण साधन मुझसे कहो। हे देवि! जिस प्रकार तुमने स्तोत्रसाधन को कहा है उसी प्रकार कृपा करके कवचसाधन भी कहो।।१।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

श्रृणु वक्ष्यामि देवेश! कवचस्य तु कारणम्।

स्तोत्रवल्लिखितं कार्यं भूर्जपत्रे कुलेश्वर!।।२।।

यधदुक्तविधानेन द्रव्येन प्रलिखेत् सुधीः।
लिखित्वा पूर्ववद् देव! पूर्वोक्तशोधनं चरेत्।।३।।
यद्यत्कल्पविधानेन संवेष्ट्य स्थापयेद् बुधः।
ततो वै विधिना मन्त्री स्वेष्टपूजां समाचरेत्।।४।।

माधवी-श्री आनन्दभैरवी ने कहा हे देवेश! हे कुलेश्वर! कवच का साधन भी मैं कह रही हूँ, सुनिये। स्तोत्र की भाँति ही कवच को भी भूर्जपत्र (भोजपत्र) पर निर्दिष्ट द्रव्यों की सहायता से लिखें एवं स्तोत्र के समान ही उसका का शोधन भी करे। मन्त्र के ज्ञाता बुद्धिमान साधक को चाहिए कि जिसमें जिस प्रकार का विधान कहा गया है उसी विधि से लिखकर उसे स्थापित करे। तदुपरान्त अपने इष्ट की पूजा करे।।२-४।।

मध्ये तु कवचस्यास्य इमं मन्त्रं जपेत् सुधीः।
मनुं तत्र प्रवक्ष्यामि शृणुष्वानन्दभैरव!।।५।।
तारत्रपं तथा कूर्च्चं तथा माया तथा च श्रीः।
महाप्रतिसरे कवचस्य मध्ये निवासं कुरु कुरु स्वाहा।।६।।
ततो महाप्रतिसरे मध्ये ताराबीजत्रयम्।
निवासपदमुच्चार्य कुरुद्वयं ततो वदेत् ।।७।।
स्वाहान्तो यन्मनुः प्रोक्तश्चाष्टोत्तरशतं जपेत्।
सहस्त्रं वा जपेद् धीमान् तस्य मध्ये षडानन!।।८।।

माधवी- हे आनन्दभैरव! कवच के मध्य में इस मन्त्र का साधक जप करे। जप का मन्त्र बताती हूँ, श्रवण कीजिये। तारत्रय (ॐ ॐ ॐ), तीन कूर्च (हूँ,हूँ,हूँ) तीन माया (ह्रीं ह्रीं ह्रीं) एवं तीन श्री (श्रीं, श्रीं,श्रीं) तत्पश्चात् महाप्रतिसरे कवचस्य मध्ये कुरु कुरु स्वाहा का उच्चारण करे। महाप्रतिसरे के पश्चात् ताराबीज (स्त्रीं) का तीन बार, तदुपरान्त निवास पद जोडकर दो बार कुरु शब्द का उच्चारण करे। अन्त में स्वाहा जोडने से यह मन्त्र बनता है- ॐ ॐ ॐ हूँ हूँ हूँ ह्रीं ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं श्रीं महाप्रतिसरे! स्त्रीं स्त्रीं स्त्रीं कवचमध्ये निवासं कुरु कुरु स्वाहा। इस मन्त्र का १०८ बार जप करे या एक हजार आठ बार जप करे। हे षडानन! जप कवच के मध्य में ही करे।।५-८।।

ततस्तु कामबीजेन कुलद्रव्येण क्षालयेत्।
ध्रुवबीजं समुच्चार्य पञ्चगव्येन तर्पयेत्।।९।।
सप्तधा तर्पणं कृत्वा दशधा चाभिषेचयेत्।

वाग्भवेनापि संसिच्य ताराबीजत्रयं वदेत्।।१०।।
सुरामांसोपाहारिणि सिद्धिं देहि ततो वदेत्।
द्विठान्तोऽयं मनुः प्रोक्तः पुनर्दश शतं जपेत् ।।११।।
ततस्तु श्रीगुरून् नत्वा विन्दुक्षेपं समाचरेत्।
वाग्भवं बीजमुच्चार्य त्रिपुरायै पदं वदेत्।।१२।।
वह्निजाया परे दत्त्वा विन्दुक्षेपमथाचरेत्।
कुलक्षालिततोयेन लिङ्गप्रक्षालनेन च ।।१३।।
विन्दुक्षेपं प्रकर्तव्यं छागरक्तेन वा पुनः।
विन्दुक्षेपं प्रकर्तव्यं अन्यथा निष्फलं भवेत्।।१४।।
एवं क्रमेण देवेश! सिद्धिर्हि जायते सदा।
नाचरेद्यादि मोहेन न तस्य फलमाप्नुयात् ।।१५।।
सन्ध्यां विना यथा मन्त्रग्रहणं निष्फलं भवेत्।
शोधनेन विना वत्स! नैव प्राप्नोति मानवः।।१६।।

इति निगमतत्त्वसारे 'कवचसाधनं'
नाम पञ्चमः पटलः।।५।।

माधवी- उसके पश्चात् कामबीज (क्लीं) से कुलद्रव्य (अर्थात् पञ्चमकार) द्वारा कवच को प्रक्षालित करे। ॐ का उच्चारण कर पञ्चगव्य से तर्पण करे। सात बार तर्पण कर दस बार अभिषिञ्चन करे। वाग्भव बीज (ऐं) के द्वारा सिञ्चन कर तीन बार तारबीज (स्त्रीं स्त्रीं स्त्रीं) उच्चारण करे। तदुपरान्त **'सुरामांसोपहारिणि सिद्धिं देहि'** कहे। तत्पश्चात् मन्त्र के अन्त में स्वाहा शब्द का उच्चारण करे। इस मन्त्र का पुनः दश शत अर्थात् एक हजार बार जप करे। इस प्रकार यह मन्त्र होगा-**स्त्रीं स्त्रीं स्त्रीं सुरामांसोपहारिणि सिद्धिं देही स्वाहा।** इसके बाद श्रीगुरु को नमस्कार करके विन्दुक्षेप करे। वाग्भव बीज (ऐं) का उच्चारण कर **त्रिपुरायै** इस पद को उच्चारित करे। तत्पश्चात् **वह्निजाया** अर्थात् **स्वाहा** का उच्चारण करे। इस प्रकार **ऐं त्रिपुरायै स्वाहा** मन्त्र से विन्दुत्याग करे। योनि-क्षालित, लिङ्गप्रक्षालित एवं छागरुधिर से विन्दु क्षेप करे, अन्यथा कोई फल प्राप्त नहीं होता है। हे देवेश! इस क्रम से अनुष्ठान करने से कवच सिद्ध हो जाता है। यदि मोहवश ऐसा न करे तो कोई साधक उसे फल नहीं प्राप्त होगा। हे वत्स! जिस प्रकार सन्ध्या के विना मन्त्र निष्फल है, उसी प्रकार शोधन के विना कवच भी निष्फल हो जाता और साधक मनुष्य उससे कुछ भी नहीं प्राप्त कर पाता।।९-१६।।

◆◆◆◆◆

अथ षष्ठः पटलः

चण्डीपाठक्रमः

*****

श्री आनन्दभैरव उवाच

चण्डीपाठक्रमं देवि! वदस्वानन्दभैरवि।
येनानुष्ठितमात्रेण साक्षात् सिद्धिः प्रजायते।।१।।
अनेन क्रमयोगेन चण्डीपाठफलं नहि।
मया प्रोक्तानि बहुधा तथापि न फलं लभेत्।।२।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा--हे आनन्दभैरवि! अब मुझसे चण्डीपाठ का वह क्रम कहो, जिसके अनुष्ठानमात्र से ही सिद्धि प्राप्त होती है। मैंने चण्डीपाठ का अनेक क्रमों से अनुष्ठान किया है, फिर भी वांछित फल नहीं प्राप्त हुआ।।१-२।।

एतद्धि संशयं कान्ते! जायते मम सन्ततम्।
चण्डी साक्षात् महादेवी प्रत्यक्षफलदायिनी।।३।।
नराणामुपकाराय चण्डीपाठः प्रकाशितः।
कदाचित्कार्यसिद्धिः स्यात्कदाचिन्नैव सिद्धयति।।४।।
पाठक्रमश्च बहुधा पुराणोक्तः कुलेश्वरि!।
तत्र तेषां क्रमादीनां सारभूतं वदस्व मे ।।५।।
नमस्ते योगदे देवि! नमस्ते कुलगामिनि!।
तदुपायं वद प्रौढे! यद्यस्ति ते कृपा मयि।।६।।

माधवी- हे कान्ते! मेरे हृदय से यह संशय-निवारण करो कि चण्डी यद्यपि साक्षात् महादेवी हैं, प्रत्यक्ष फल-प्रदायक हैं, मनुष्यों के उपकार हेतु चण्डी का पाठक्रम भी विविध प्रकार से वर्णित किया गया है, किन्तु किसी समय उससे कार्य सिद्ध होता है और किसी समय नहीं होता। हे कुलेश्वरि! पुराणों में भी अनेक प्रकार से पाठ के क्रम कहे गये हैं। इन समस्त क्रमों में जो क्रम सारभूत हो, उसे कहो। हे देवि! योग का ज्ञान प्रदान करने वाली हे कुलगामिनि! तुम्हें नमस्कार है। हे प्रौढे! यदि आपकी मेरे ऊपर कृपा है तो उस उपाय का मुझसे वर्णन कीजिये।।३-६।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

पाठक्रमश्च बहुधा यद्यस्ति कुलभैरव।
सारभूतं विना वत्स! नहि सिद्धिः प्रजायते।।७।।
भावयोगं विजानीयाद् दिव्यवीरपशुक्रमात्।
पशुविप्रं समाश्रित्य पशूनां क्रममाचरेत्।।८।।
कुलीनां विप्रमाश्रित्य कौलिकक्रममाचरेत्।
अक्रमं यदि कुर्वीत तस्य पापफलं शृणु।।९।।

माधवी- हे कुलभैरव! पाठक्रम के बहुत से प्रकार वर्णित हैं। फिर भी हे वत्स! विना सारभूत क्रम के सिद्धि नहीं प्राप्त होती है। यह क्रम भावयोग से जाना जाता है। दिव्य, वीर एवं पशु क्रम से भाव तीन प्रकार का कहा गया है। 'पशुविप्र' क्रम का आश्रय ले दक्षिणाचार क्रम का पालन करे। यदि कुलीन विप्र का आश्रय ले तो कौलिक क्रम के अनुसार पाठ करे। जो साधक क्रमहीन पाठ करता है, उसको उस पाठ के फलस्वरूप होनेवाले पाप का अब फल सुनो।।7-9।।

प्रत्यक्षरे ब्रह्महत्यां प्राप्नोति हि न संशयः।
कुलजस्य च पाठेन सर्वसिद्धिः प्रजायते।।१०।।
कुलीनो यदि भुञ्जीत पशुविप्रस्य वेतने।
तस्य क्रियादिकं सर्वं विफलं जायते हर!।।११।।

माधवी- प्रत्येक अक्षर में ब्रह्महत्या का पाप होता है, इसमें संशय नहीं है। कुलीन कौलिक के पाठ से समस्त सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। हे हर! यदि कुलीन ब्राह्मण पशुब्राह्मण के यहाँ भोजन ग्रहण करता है। तो उस कुलीन की समस्त क्रियायें नष्ट हो जाती हैं।।१०-११।।

लोभात् स्नेहाद् भयाद्वापि यदि भुञ्जीत शङ्कर!।
पूजा पराङ्मुखी याति विपदः स्युः पदे-पदे।।१२।।
तस्मात् कुलीनमाश्रित्य चण्डीपाठे नियोजयेत्।
तत्प्रयोगं प्रवक्ष्यामि शृणुष्व कमलासुत!।।१३।।

माधवी- हे शङ्कर! यदि लोभ, स्नेह, भय आदि से 'पशु' के यहाँ भोजन ग्रहण करता है तो उसकी पूजा पराङ्मुखी हो जाती है और पग-पग पर उसे विपत्तियों का सामना करना पड़ता है। कुलीन के आश्रित होकर ही चण्डीपाठ करना चाहिए। हे

कमलासुत! मैं चण्डी के उस प्रयोग को कह रही हूँ, तुम श्रवण करो।।१२-१३।।

पुस्तकं प्रथमं देव! शोधयेद् बहुयत्नतः।
आदौ त्रिकोणं संलिख्य ताम्रपात्रे कुलेश्वर!।।१४।।
चतुर्दिक्षु मातृकार्णान् विलिखेत् साधकोत्तमः।
अभ्युंक्ष्य पञ्चगव्येन सर्वद्रव्यं महेश्वर!।।१५।।
सप्तवारं पुस्तकं च प्रोक्षणं कारयेद् बुधः।
ततो कुलजं शोध्य तत्क्षणे च पिवेद्वशी।।१६।।
स्वस्तिकान् वाचयित्वा तु ततः सङ्कल्पयेद्बुधः।
सम्पूजयेत् ततः चण्डीं पुस्तकोपरि शङ्कर।।१७।।
अङ्गन्यासादिकं कृत्वा ततो ध्यायेत्समाहितः।।१८।।

माधवी- हे देव! हे कुलेश्वर! सर्वप्रथम पुस्तक का बहुविधि-पूर्वक शोधन करे। तत्पश्चात् ताम्रपात्र में सर्वप्रथम त्रिकोण लिखे एवं चारो दिशाओं में मातृका वर्ण लिखे। पञ्चगव्य से सभी द्रव्यों का प्रोक्षण करे। हे महेश्वर! सात बार पुस्तक का प्रोक्षण करे। तदनन्तर 'कुलज' द्रव्य का शोधन कर पीने से देवता वेशीभूत होते हैं। अब इसके बाद स्वस्त्यन पढ़कर सङ्कल्प करे। हे शङ्कर! इसके उपरान्त पुस्तक के ऊपर चण्डी का पूजन करे और अङ्गन्यासादि करके समाहित हो भगवती का ध्यान करे।।१४-१८।।

सिंहस्कन्धाधिरुढ़ां नानालङ्कारभूषिताम्।
कुलेश्वरीं महाप्राणां सदा स्मेरमुखीं शुभाम्।।१९।।
चतुर्वर्गप्रदां देवीं रक्षाकर्त्रीं त्रिलोचनाम् ।
चतुर्भुजां महादेवीं नागयज्ञोपवीतिनाम्।।२०।।
रक्तवस्त्रापरीधानां बालार्कसदृशीं तनुम्।
शौनकाद्यैर्मुनिगणैः सेवितां चण्डगेहिनीम्।।२१।।

माधवी- सिंहस्कन्ध पर आसीन, विविध अलङ्कारों से विभूषित, कुलेश्वरी, महाप्राणा, सदा प्रसन्नमुखी, शुभा, धर्म-काम-मोक्ष को प्रदान करनेवाली, रक्षा करने वाली, तीन नेत्र वाली और चार भुजाओं से युक्त महादेवी नाग का यज्ञोपवीत धारण किये हुये हैं। इस प्रकार लाल वस्त्र धारण करने वाली, सूर्य के समान तेजस्वी शरीर वाली, शौनकादि मुनिगणों से सेवित चण्डगेहिनी दुर्गा का ध्यान करे।।१९-२१।।

इति ध्यात्वा महादेवीं मनुनाऽनेन पूजयेत्।
तारं तारत्रयं चोक्त्वा तथा कूर्चत्रयं सुत!।।२२।।
महाचण्डीपदं चोक्त्वा सिद्धिं देहि द्विठान्तकः।
चतुःषष्ट्युपचाराद्यैर्मनुनाऽनेन पूजयेत् ।।२३।।

माधवी- इस प्रकार ध्यान करके इस मन्त्र द्वारा देवी की पूजा करे। हे सुत! तार (ॐ) तारत्रय (ऐं, ह्रीं, क्लीं) और कूर्च बीजत्रय (हूँ हूँ हूँ) का उच्चारण करके महाचण्डी पद का उच्चारण कर "सिद्धिं देहि स्वाहा" का उच्चारण करे। इस प्रकार **ॐ ऐं ह्री क्लीं हूँ हूँ हूँ महाचण्डी सिद्धिं देहि स्वाहा** मन्त्र से देवी की चौसठ उपचारों द्वारा पूजा करे।।२२-२३।।

इति मन्त्रेण सम्पूज्य ततश्चण्डीं पठेत् सुधीः।
माहात्म्यान्ते पुनर्मन्त्रपुटं कृत्वा जपेत्सुधीः।।२४।।
माहात्म्यान्ते कुलद्रव्यैरभावे पञ्चगव्यकैः।
प्रोक्षयेत् पुस्तकं धीमानन्यचेष्टां विवर्जयेत्।।२५।।
दशभिश्च कुलद्रव्यैः वितानधूपदीपकैः।
वामदक्षिणयोगेन धूपयेद् बहुयत्नतः।।२६।।
पाठान्तेऽपि च तन्मन्त्रमष्टोत्तरशतं जपेत्।
तन्मनुं मातृकावर्णैः पुटं कृत्वा पुनर्जपेत् ।।२७।।
ततो जपं समर्प्याथ देवीसूक्तं पुनः पठेत्।
ततो वै दक्षिणां दत्त्वा यथाविभवमात्मनः।।२८।।
स्वयोषित् परयोषिद्वा कुलोक्तविधिनाऽर्चयेत्।
ततो वै भोजयेत्तां तु दक्षिणां च निवेदयेत् ।।२९।।
अनेन क्रमयोगेन चण्डीपाठफलं लभेत्।।३०।।

इतिश्रीनिगमतत्त्वसारतन्त्रे 'चण्डीपाठक्रमः'

नाम षष्ठः पटलः।।६।।

माधवी- मन्त्र से पूजन के पश्चात् चण्डी का पाठ करे। माहात्म्य के अन्त में पुनः मन्त्र से पुटित करके जप करे। जप के अन्त में कुलद्रव्यों (मद्य, मांस, मदिरा, मैथुन व मुद्रा) से पुस्तक का प्रोक्षण करे। कुलद्रव्य के अभाव में पञ्चगव्य का प्रयोग करे। अन्य चेष्टा से रहित होकर दस कुलद्रव्यों को लेकर मण्डप को धूप-दीप

से धूपित-दीपित करे। वाम एवं दक्षिण के योग से बहुत यत्न से धूपित करे। पाठ के अन्त में पूर्वकथित मन्त्र का १०८ बार जप करे। उस मन्त्र को मातृका वर्णों से पुटित करके जप करे। जप समर्पण करके देवी-सूक्त का पुनः पाठ करे। अपने सामर्थ्य के अनुकूल दक्षिणा देकर अपनी पत्नी या दूसरी स्त्री का कुलविधान के अनुसार पूजन करे। इसके पश्चात् उस रमणी को भोजन करा कर दक्षिणा प्रदान करे। इस क्रम से करने पर ही चण्डीपाठ का फल प्राप्त होता है।।२४-३०।।

इस प्रकार श्री निगसतत्त्वार तन्त्र के छठे पटल की अजय कुमाररचित 'माधवी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई।

+++++

अथ सप्तमः पटलः

पञ्चप्राणात्मकब्रह्मज्ञानम्

•••••

श्री आनन्दभैरव उवाच

वद कान्ते! चापरं मे पञ्चवाच्वत्मकं शुभम्।
येनानुष्ठितमात्रेण योगज्ञानं प्रवर्तते।।१।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा हे कान्ते! अब पञ्चावाच्वत्मक दूसरे शुभ विधान का वर्णन करो, जिसके अनुष्ठान से साधक को योग का ज्ञान प्राप्त होता है।।१।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

पञ्चवाय्वात्मकं ब्रह्म योगज्ञानस्य कारणम्।
कुलीनस्य तथा वत्स! पञ्चवाय्वात्मिका क्रिया।।२।।
प्राणापानः समानश्चोदानव्यानौ च वायवः।
मनःस्वरूपं यद् ब्रह्म एते तस्याश्च संख्यया।।३।।
प्राणस्थाने यदा ब्रह्म चाभ्युपैति कुलेश्वर!।
मत्तवत् क्रीडतो लोके बलवान् दाम्भिको भवेत्।।४।।
अपानस्थो यदा गच्छेत्तदा व्याकुलचेतसः।
मनस्थाने यदा गच्छेत् समभावो विजायते।।५।।

व्यानस्थोऽपि यदा चेतो मनो विह्वलदायकः।
उदानस्थो यदा गच्छेदूर्ध्वशून्यं विजायते।।६।।
ब्रह्मरन्ध्रे गुरुस्थाने यदा स्युः पञ्चवायवः।
तदा परंब्रह्म दृष्टिर्जायते साधकस्य च।।७।।

इति श्रीनिगमतत्त्वसारतन्त्रे 'पञ्चप्राणात्मकब्रह्मज्ञानं'

नाम सप्तमः पटलः।।७।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा हे वत्स! ब्रह्म पञ्चवाय्वात्मक है; जो योगज्ञान का कारण है तथा कुलीन साधक की क्रिया भी पञ्च वाय्वात्मक ही होती है। पाँच प्राणवायु - १. प्राण, २. अपान, ३. समान, ४. उदान और ५. व्यान है। इन पाँच एवं मनस्वरूप ब्रह्म को लेकर छः प्रकार हैं। हे कुलेश्वर! प्राणवायु के साथ जब मन होता है तब यह शरीर मतवाले की भाँति बलवान एवं दम्भी बनकर क्रीड़ा करने लगता है। जब चित्त व्याकुल हो जाता है और मन वायु के साथ रहता है तब यह शरीर स्थिरभाव में रहता है। मन जब व्यान वायु के साथ रहता है तब चित्त को विह्वल करता है एवं जब यह उदान वायु का साथ करता है तो उर्ध्वशून्य हो जाता है। जब यह मन गुरुस्थान ब्रह्मरन्ध्र में पञ्च वायु के साथ जाता है तब साधक को परंब्रह्म का दर्शन होता है अर्थात् उसे परम ब्रह्म की प्राप्ति होती है।।२-७।।

+++++

अथाष्टमः पटलः

पञ्चतत्त्वशुद्धिः

श्री आनन्दभैरव उवाच

अपरं श्रोतुमिच्छामि पञ्चतत्त्वादिशोधनम्।
यं विना न भवेद् देवि। देवानामर्चनादिकम्।।१।।
यं पीत्वा श्रीमहादेव! साक्षाद्ब्रह्ममयो विभुः।
यस्य प्रसादाच्छ्रीब्रह्मा जगद्धाता सनातनः।।२।।
यस्य प्रसादाच्छ्रीकृष्णः कंसादींश्च दुरासदान्।
जघान तृणवत्सर्वं पञ्चतत्त्वप्रसादतः।।३।।
तत्त्वं वद स मे कान्ते! येन सिद्धिः प्रजायते।।४।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा हे देवि! मेरी उस पञ्चतत्त्वादि शोधन को सुनने की इच्छा है, जिसके विना देवताओं की पूजा-अर्चना नहीं हो सकती। जिस तत्त्व का पान करके श्री महादेव स्वयं ब्रह्ममय हो गये, ब्रह्मा जी जगत के धाता एवं सनातन बने और जिस तत्त्व के प्रसाद से श्रीकृष्ण जी ने कंसादि दानवों का सहज में ही वध कर दिया, उस तत्त्व को मुझसे कहो; जिसके प्रभाव से सिद्धि प्राप्त होती है ।।१-४।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

सर्वासामपि पूजानां प्रधानं पञ्चतत्त्वकम् ।
पञ्चतत्त्वं विना पूजा अभिचाराय कल्प्यते।।५।।
मद्यं मांसं तथा मीनं मुद्रा मैथुनमेव च।
पञ्चतत्त्वमिदं प्रोक्तं कोटिजन्माघनाशनम्।।६।।
तस्य शुद्धिविधानं हि शृणुष्वानन्दभैरव!।
स्वमन्दिरोद्भवं द्रव्यं उत्तमं परिकीर्तितम्।।७।।
सौंज्यागारसमुद्भूतमधमं परिकीर्तितम्।
अन्त्यजादि समुद्भूतं निकृष्टं परिकीर्तितम्।।८।।
अधमस्य प्रदानेन हरेदायुश्च सम्पदः।
पानं यस्य मुखे नास्ति दूतीयजनपूर्वकम्।।९।।
तस्य दीक्षा वृथा देव! सत्यमेव न संशयः।
ततस्तु कारणं देव! समानीय घटस्थितम्।।१०।।
रक्तवस्त्रेण सम्वेष्ट्य रक्तमाल्येन भूषितम्।
त्रिकोणमण्डलं लिख्य तस्योपरि महेश्वर!।।११।।
ततश्च रक्तवस्त्रेण दृढं बन्धनमाचेरत्।
अकारादिस्वरपुटं शुक्रबीजं शतं जपेत्।।१२।।
एवं स्वरपुटं कृत्वा दीर्घषट्केन शङ्कर!।
मायाबीजं शतं जप्त्वा कालीबीजं शतं जपेत्।।१३।।
ततो जपेद् ब्रह्मबीजं यावद् गन्धं न विन्दति।
ततश्च बन्धनं मुक्त्वा भैरवीं तत्र पूजयेत्।।१४।।
भैरवं तत्र सम्पूज्य यथोक्तविधिना हर!।
ततो जपेदिष्टमन्त्रं तस्योपरि महेश्वर!।।१५।।

मातृकार्णपुटं कृत्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रकम्।
यावद्भवति देवेश! दुग्धवत् कुलवारुणी।।१६।।
तावज्जपेन्त्रमिष्टमन्त्रं तथा प्रिय!।
अनेन क्रमयोगेन तत्त्वशुद्धिर्विधीयते।।१७।।

इति श्रीनिगमतत्त्वसारतन्त्रे पञ्चतत्त्व-
शुद्धिर्नामाष्टमः पटलः।।८।।

*****

माधवी- श्री आनन्दभैरवी ने कहा- समस्त पूजाओं में 'पञ्चतत्त्व' का पूजन ही प्रधान पूजा है। पञ्चतत्त्व के विना पूजा करना अभिचार कहा गया है। मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा एवं मैथुन यही पञ्च तत्त्व कहलाते हैं। यह पञ्च तत्त्व करोड़ों जन्मों के पापों का नाश करने वाला है। हे आनन्दभैरव! आप पञ्च तत्त्वों के शुद्धि का विधान सुनिये। अपने मन्दिर (स्थान) का बना हुआ 'द्रव्य' उत्तम कहा जाता है तथा सौंज्यागार का बना हुआ द्रव्य अधम कहा जाता है। अन्त्यजादि के यहाँ का बना हुआ द्रव्य निकृष्ट माना जाता है। अधम द्रव्य देवता को प्रदान करने से आयु एवं धन का नाश होता है। जिस साधक के मुख में दूतीयजनपूर्वक द्रव्यपान नहीं होता उस साधक की दीक्षा हे देव! व्यर्थ हो जाती है, यह निश्चित सत्य है, इसमें संशय नहीं है। हे देव! 'कारण' को लाकर घट में रखे एवं रक्तपुष्पों की माला से घट को विभूषित करे और घट को लाल वस्त्र से वेष्टित करे। घट के ऊपर त्रिकोण मण्डल बनाये एवं रक्त वस्त्र से दृढ़ बन्धन करे। अकारादि स्वरों से शुक्रबीज (शं) को सम्पुटित करके १०० बार मन्त्र का जप करे। कलश के ऊपर छः दीर्घ स्वरों से सम्पुटित शां शीं शूं शैं शौं शः का भी शत बार जप करे। मायाबीज (ह्रीं) को स्वर से पुटित कर १०० बार जप करे। कालीबीज (क्रीं) को भी इसी प्रकार पुटित कर १०० बार जप करे। इसके पश्चात् ब्रह्मबीज (ॐ) का तब तक जप करे जब तक 'कारण' सुगन्धित न हो जाय। इसके पश्चात् कलश को बन्धनमुक्त कर देवी आनन्द भैरवी की पूजा करे। हे हर! वहीं पर यथाविधि श्री आनन्दभैरव का भी पूजन करे। इसके पश्चात् कलश के ऊपर अपने इष्ट के मन्त्र का शत बार जप करे। मातृकार्णपुटित मूल मन्त्र का एक हजार जप करे। हे देवेश! जब तक कुलवारुणी दुग्धवत् न हो जाय तब तक कलश के ऊपर 'महामन्त्र' एवं 'इष्टमन्त्र' का जप करता रहे। हे प्रिय! इस प्रकार के क्रम योग से तत्त्व शुद्ध होकर देवता को प्रदान करने के योग्य हो जाता है।।५-१७।।

+++++

अथ नवमः पटलः

तत्त्वशोधनम्

*****

श्री आनन्दभैरव उवाच

अपरं श्रोतुमिच्छामि मांसादिशोधनं प्रिये!।
तदुपायं वद प्रौढे! येन दोषो न विद्यते।।१।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा- हे प्रिये। मैं मांसादि अन्य तत्त्वों के शोधन का उपाय जानना चाहता हूँ। तत्त्वशोधन का ऐसा उपाय कहो, जिसके करने से किसी प्रकार का दोष नहीं लगता।।१।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

मांसं तु त्रिविधं प्रोक्तं ख-भू-जलचरं हर!।
देव्याः प्रीतिकरं सद्यः त्रिविधं मांसमुच्यते।।२।।
शुद्धिं कुर्याच्च विधिवच्छास्त्रोक्तविधिना सुधीः।
नाचरेद्यादि मोहेन तत्कृत्वा पातकं लभेत्।।३।।
तन्मांसं च समभ्यर्च्य कारणैः प्रोक्षयेत् सुधीः।।४।।

माधवी- श्री आनन्दभैरवी ने कहा हे हर! मांस तीन प्रकार का कहा गया है। ख अर्थात् खेचर (आकाशचारी जीवों का), भू अर्थात् भूचर (पृथिवी पर रहने वाले जीवों का) एवं जलचर (जल में रहने वाले जीवों का)। यह तीनों प्रकार के मांस ही देवी को प्रीतिकर हैं। विविध शास्त्रोक्त विधियों से शुद्ध करके देवी को सुधी साधक मांस अर्पित करे। मोह से ग्रसित होकर यदि व्यक्ति इनकी शुद्धि नहीं करता और अशुद्ध पञ्च तत्त्व से देवी की पूजा करता है तो वह पाप का भागी होता है। बुद्धिमान साधक को मांस की पूजा कर कारण से उसका प्रोक्षण करना चाहिए।।२-४।।

मीनशुद्धिविधिं वक्ष्ये शृणुष्वानन्दभैरव!।
दग्धमीनं समानीय भर्जितं वा कुलेश्वर!।।५।।
मूलमन्त्रैः कारणेनाभ्युंक्ष्य च मनुं जपेत्।
पद्भ्यां भूमिं दिशः श्रोत्रात्तथा लोकानकल्पयन्।।६।।

माधवी- हे आनन्दभैरव! अब मीन (मत्स्य) शुद्धि की विधि कह रही हूँ, सुनिये। दग्ध मत्स्य या भर्जित मत्स्य को सम्मुख रख कर मूल मन्त्र का दश बार

स्मरण कर कारण से उसका प्रोक्षण कर **ॐ पद्भ्यां भूमिं दिशः श्रोत्रात् तथा लोकानकल्पयन् स्वाहा मन्त्र** को तीन बार पढ़कर उसकी शुद्धि करे।।५-६।।

मुद्राशुद्धिविधिं वक्ष्ये येन शुद्धिर्विधीयते।
ततो वै भर्जितां मुद्रां समानीय च शोधयेत्।।७।।

माधवी- अब मुद्रा शुद्धि का विधान कहती हूँ, जिससे शुद्धि होती है। भर्जिता मुद्रा को सम्मुख रखकर मत्स्यशोधन करना चाहिए।।७।।

अथ वक्ष्ये महेशान! शुद्धिं तु मैथुनस्य च।
आनीय प्रमदां कान्तां घृणालज्जाविवर्जिताम्।।८।।
स्वकान्तां परकान्तां वा सुवेशां स्थाप्य मण्डले।
प्रथमं कारणं दत्वा यथोक्तविधिना शिव!।।९।।
वाग्भवं लिङ्गमूले तु शतमष्टोत्तरं जपेत्।
योनिगर्ते चन्दनं दत्वा कामबीजत्रयं जपेत्।।१०।।
ततः पठेद् वेदमन्त्रां सुस्थेन मनसा प्रिय!।।११।।

माधवी- हे महेशान! अब मैथुनशुद्धि का विधान कहती हूँ। सुन्दरी रमणी को लाकर घृणा-लज्जा से रहित होकर स्वयं की स्त्री या अन्य की स्त्री, जो कि सुन्दर वेषधारिणी हो, लाकर मण्डल में स्थापित करे। हे शिव! सर्वप्रथम कारण देकर यथोक्त विधि से उसका प्रोक्षण करे। लिङ्गमूल में वाग्भव बीज (ऐं) का १०८ बार जप करे। तत्पश्चात् योनिगर्त्त में चन्दन लगाकर तीन बार कामबीज "क्लीं" का जप करे। इसके पश्चात् सुस्थिर मन से निम्न वेदमन्त्र का पाठ करे-

ॐ गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वति।
गर्भं धेह्यश्विनौ देवा, वाधत्तां पुष्करस्त्रजौ।।
अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्।
होतारं रत्नधातमम्।
ॐ अज्ञातं यद् नाज्ञातं, यज्ञस्य क्रियते मिथः स्वाहा।
अयमूर्यावतो वृक्षाः ऊर्ज्जीव फलिनी भव।
पर्वं वनस्पते नुत्वा नुत्वा च सूयतां रयि।

इस प्रकार करने से मैथुन का शोधन होता है।।८-११।।

शोधयित्वा पञ्चतत्त्वं भक्षयित्वा फलं लभेत्।
अशुद्धं पञ्चतत्त्वं च भक्षयेत् साधको यदि।।१२।।

मन्त्रः पराङ्मुखो याति आपदस्तस्य पदे पदे।
आदिबीजं समुच्चार्य महापिशाचिनी पदम्।।१३।।
ततः सर्वं मे वशं च कुरुद्वयं ततो वदेत्।
स्वाहान्तोऽयं मनुः प्रोक्तः सर्वेषां वश्यकर्मणि।।१४।।
पञ्चतत्त्वं समादाय वामहस्तकनिष्ठया।
मन्त्रेणानेन तिलकं सर्वेषां वश्यकर्मणि।।१५।।
शोधनेन विना वत्स! सिद्धिहानिः प्रजायते।
अपरं परमेशान! शुद्धिर्हि कारणं नहि।।१६।।
मम ज्ञानेन वर्तेते तत्त्वसारात् परात्परम्।
नराणामुपकाराय तव स्नेहात् प्रकाशितम्।।१७।।

इति श्रीनिगमतत्त्वसारतन्त्रे ''तत्त्वशोधनं''

नाम नवमः पटलः॥9॥

◆◆◆◆◆

माधवी- शोधित पञ्चतत्त्व को ग्रहण करने से इच्छित फल प्राप्त होता है, किन्तु यदि साधक अशुद्ध पञ्च तत्त्व को ग्रहण करता है तो मन्त्र उससे विमुख हो जाते हैं तथा उसे पग-पग पर विपत्तियाँ मिलती हैं। आदिबीज (ह्रीं) का उच्चारण करके ''महापिशाचिनि' पद का उच्चारण करे। इसके पश्चात् ''सर्वं मे वशं कुरु-कुरु'' का उच्चारण करे तथा अन्त में स्वाहा का उच्चारण करे। यह सर्ववशीकारक मन्त्र है **-ह्रीं महापिशाचिनि! सर्वं मे वशं कुरु कुरु स्वाहा।** इस मन्त्र से संशोधित पञ्चतत्त्व को लेकर बायें हाथ की कनिष्ठा से तिलक करने पर साधक को जो भी देखेगा वह उसका वशवर्ती हो जायेगा। हे वत्स! पञ्चतत्त्व के शोधन के विना सिद्धि की हानि होती है। हे परमेशान! शुद्धि करने का और कोई कारण नहीं है। मेरे ज्ञान में तत्त्वसार से बढ़कर कोई अन्य विधान नहीं है। मनुष्यों के हितार्थ एवं स्नेहवश ही इसे मैंने प्रकाशित किया है।।१२-१७।।

श्रीनिगमतत्त्वसारतन्त्र में तत्त्वशोधननामक नवें पटल की अजय कुमार उत्तमलिखित 'माधवी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई।

+++++

अथ दशमः पटलः

संविदाकल्पः

* * * * *

श्री आनन्दभैरव उवाच

अपरं श्रोतुमिच्छामि संविदाकल्पमुत्तमम्।
येन हीना न शुद्धिः स्यात्तन्मे वद कुलेश्वरि!।।१।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा- हे कुलेश्वरि! मैं कल्पश्रेष्ठ संविदाकल्प को सुनना चाहता हूँ। अतः तुम उसे कहो, जिसके विना साधक को सिद्धि क्योंकि उसके नहीं की प्राप्ति होती है।।१।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

कलिकाले महेशान! संविदाकल्पमुत्तमम्।
सर्वेषां साधनं मध्ये विजया चाधिकं स्मृतम्।।२।।
यां विना श्रीमहादेवः सर्वकारणवर्जितः।
संविदा विजयां पीत्वा योगज्ञानं करोति यः।।३।।
सर्वधर्मयुतो भूत्वा विहरेद्धरवद् भुवि।
बहुधा शोधनं तस्याः विजयायाः कुलेश्वर!।।४।।
प्रीतिदा चण्डिकायाश्च सर्वकारणकारिणी।।५।।

माधवी- श्री आनन्दभैरवी ने कहा हे महेशान! कलिकाल में संविदाकल्प श्रेष्ठ है। समस्त साधनों के मध्य में ''विजया साधन'' सर्वोत्तम कहा गया है, जिसके विना श्रीमहादेव भी सभी कारणों से रहित रहते हैं। संविदा विजया को पीकर जो मनुष्य योगज्ञान प्राप्त करता है वह सभी धर्मों से युक्त होकर शिव के समान ही सम्पूर्ण पृथिवी पर विहार करता है। हे कुलेश्वर! विजया-शोधन के बहुत प्रकार कहे गये हैं समस्त कारणों के कारणभूत विजया से पूजन करने पर भगवती चण्डिका प्रसन्न हो जाती है।।२-५।।

श्री आनन्दभैरव उवाच

बहुधा साधनं तस्याः विजयायाः परमेश्वरि!।
तेषां मध्ये सारभूतं तद्विधानं वद प्रिये!।।६।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा-हे परमेश्वरि! हे प्रिय! बहुत प्रकार के विजयासाधनों में से जो सारभूत प्रकार का साधन है, उसको मुझसे कहो।।६।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

संक्षेपात् साधनं तस्याः शृणु वत्स! समाहितः।
वाग्भवं तु रमा माया संविदपदमुत्तमम्।।७।।
सिद्धिं देहि पदं चोक्त्वा ततः स्वाहा मनुर्मतः।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा तस्योपरि महेश्वर!।।८।।
ततो वै दर्शयेद् धीमान् योनिमुद्रां महेश्वर!।
वारत्रयं तु पानं तु कर्त्तव्यं कुलभैरव!।।९।।
हस्ते पात्रं गृहीत्वा तु सुधा देवीं विभावयेत्।।१०।।

माधवी- श्री आनन्दभैरवी ने कहा--हे वत्स! सावधान होकर उस संक्षिप्त विधान को सुनो। वाग्भव (ऐं), रमा (श्रीं), माया (ह्रिं) 'संविदा' पद तथा सिद्धिं देहि पद का उच्चारण करे। तदुपरान्त 'स्वाहा' का उच्चारण करे। इस प्रकार **ऐं श्रीं ह्रीं संविदे सिद्धिं देहि स्वाहा** यह मन्त्र होता है। विजया के ऊपर एक सौ आठ बार इस मन्त्र का जप करे। हे महेश्वर! उसके पश्चात् बुद्धिमान साधक "योनिमुद्रा" प्रदर्शित करे। और उसके पश्चात् तीन बार विजया का पान करे। हे कुलभैरव! विजयापान करते समय हाथ में पात्र ग्रहण कर सुधा देवी का ध्यान करे।।७-१०।।

ॐ संविदे ज्ञानदे नित्य! महामोक्षप्रदायिनि!।
त्वत्प्रसादान् मम ज्ञानं सुस्थिरं च विजायते।।११।।

माधवी- हे संविदे! ज्ञानदायिनि, शाश्वति! महामोक्षप्रदायिनि! तुम्हारी कृपा से मेरा ज्ञान विधिवत स्थायी होकर रहे।।११।।

इमं मन्त्रं समुच्चार्य संविदा विजयां पिवेत्।
अज्ञानाद्यदि वा मोहाद्विजयापानकर्मणि।।१२।।
नोच्चारयेदिमं मन्त्रं तस्य सिद्धिर्न जायते।।१३।।

इति श्रीनिगमतत्त्वसारतन्त्रे 'संविदाकल्प'
नाम दशमः पटलः।।१०।।

माधवी- उपरोक्त मन्त्र (श्लोक संख्या ११ द्वारा पठित मन्त्र) का उच्चारण कर संविदा विजया का पान करे। अज्ञानवश या मोहवश जो भी व्यक्ति

विजयापान करते समय इस मन्त्र का उच्चारण नहीं करता, उसे सिद्धि की प्राप्ति नहीं होती है।।१२-१३।।

श्रीनिगमतत्त्वसारतन्त्र में संविदा कल्प नामक दशम पटल की अजय कुमारउत्तमरचित 'माधवी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई।

+++++

अथैकादशः पटलः

भावमाहात्म्यम्

•••••
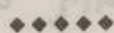
श्री आनन्दभैरव उवाच

एकं पृच्छामि देवेशि! वद त्वं कारणं शुभम्।
अशक्तानां महेशानि! कथं सिद्धिर्विजायते?।।१।।
तदुपायं वद प्रौढे! लोकानामुपकारिणि!।
निर्ज्ञाना निर्धनाः सर्वे लोकाः सन्ति कलौ युगे।।२।।
तेषां सिद्धिश्च देवेशि! केनोपायेन जायते?।।३।।

माधवी- श्री आनन्दभैरव ने कहा--हे देवेशि! अब तुम मुझसे शुभ 'कारण' का वर्णन करो। हे महेशानि! अशक्त साधकों को किस प्रकार सिद्धि प्राप्त होती है? संसार का उपकार करने वाली हे प्रौढ़े! उस उपाय को मुझसे कहो। कलियुग में समस्त जन अज्ञानी एवं निर्धन होंगे। हे देवेशि! उन लोगों को किस उपाय के द्वारा सिद्धि की प्राप्ति होगी।।१-३।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

एतत् क्रियाद्यशक्तश्चेत् सत्सङ्गं करोति यः।
तस्य सर्वसुसिद्धिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा।।४।।
वीरभावोऽपि सर्वेषां श्रेयो भवति शङ्कर!।
पञ्चतत्त्वैर्महासिद्धिरनायासेन जायते।।५।।
समभावं च निर्वाणं जायते कुलभैरव!।
जम्बूद्वीपे महेशान! मद्यात् सिद्धिर्न संशयः।।६।।
अङ्गवङ्गकलिङ्गेषु स्त्रिया सिद्धिर्विजायते।

गौड़शाल्ववदेशार्णे पशुभावाद् विजायते।।७।।
जम्बूद्वीपे महेशान! मद्ययोग्या जनाः स्मृताः।
अपरे ब्राह्मणाः सर्वे ते यान्ति परमां गतिम्।।८।।
यदन्यशास्त्रदृष्ट्या च विह्वलो जायते हर!।
कारणं नरकस्यैव इति जानीह तत्त्वतः।।९।।
मद्यभोग्या ब्राह्मणाश्च कलौ यान्ति परां गतिम्।
यस्य ज्ञाने महेशान! स्त्रियो हि मुक्तिदा सदा।।१०।।
तस्य सर्वाणि कर्माणि प्रकरोम्यहमिच्छया।
हा हन्त! पशुशास्त्रज्ञः कलौ तिष्ठति सर्वथा।।११।।
दिवि दिव्यन्ति दिव्याश्च वीरास्तिष्ठन्ति भूतले।
पशवः सन्ति पाताले क्रमशः कौलिकेश्वर!।।१२।।
भावमाश्रित्य निवसेद्यत्र कुत्रापि शङ्कर!।
भावं विना न सिद्धिः स्यात् सर्वथैव कुलेश्वर!।।१३।।

माधवी- श्री आनन्दभैरवी ने कहा--इन क्रियाओं को करने में अशक्त लोगों को चाहिये कि वे वीरों अथवा कौलिकों का सत्संग करें। ऐसा करने से सिद्धियाँ शीघ्र प्राप्त हो जाती हैं। इसमें अन्यत्र विचार करने का कोई कारण नही है। हे शङ्कर! वीरभाव से सभी का कार्य सिद्ध होते हैं। पञ्चतत्त्वों के द्वारा महासिद्धि अनायास ही प्राप्त होती है एवं हे कुलभैरव! समभाव की प्राप्ति होकर मोक्ष की प्राप्ति होती है। हे महेशान! जम्बू द्वीप में 'मद्य' से सिद्धि प्राप्त हो जाती है, इसमें संशय नहीं है। अङ्ग, वङ्ग एवं कलिङ्ग में 'स्त्रियों' के माध्यम से सिद्धि की प्राप्ति होती है। गौड़ एवं शाल्व देशों में 'पशुभाव' से सिद्धि प्राप्त होती है। हे महेशान! जम्बूद्वीप में मनुष्य एवं ब्राह्मण मद्यभोगी होंगे। वे सभी परमगति को प्राप्त होंगे। हे हर! अन्य शास्त्रों को देखकर जो विह्वल होते हैं उन्हें नरक की प्राप्ति होती है। यही तत्त्व जानना चाहिए। कलियुग में मद्यभोगी ब्राह्मण मोक्ष को प्राप्त करते हैं। हे महेशान! जो यह जानता है कि स्त्री से मोक्ष प्राप्त होता है उस साधक के समस्त कार्य मैं सदैव अपनी ही इच्छा से पूर्ण किया करती हूँ। दुःख की बात है कि कलियुग में सदा ही पशुशास्त्र के ज्ञाता होंगे। देवतागण स्वर्ग में दिव्य भाव से तथा वीर साधक पृथिवी में वीर भाव से एवं हे कौलेश्वर! पशु साधक पाताल में पशुभाव से अर्चना करते हैं। हे कुलेश्वर! भाव के आश्रित होकर कहीं पर भी रहकर उपासना की जा सकती है। भाव के विना सिद्धि की प्राप्ति किसी भी प्रकार से

नहीं होती, अतः भाव का आश्रयण कर ही सदा निवास करना चाहिए।।४-१३।।

श्री आनन्दभैरव उवाच

दीपिनीं परमां विद्यां यदि तेऽस्ति कृपा मयि।
येनाशक्तो जनः पापं न प्राप्नोति कदाचन।।१४।।

माधवी- हे देवि! यदि मेरे ऊपर आपकी कृपा हो तो परम विद्या 'दीपिनी' का वर्णन करो, जिसके प्रभाव से मनुष्य को पाप नहीं लगता है।।१४।।

श्री आनन्दभैरव्युवाच

दीपिनीं परमां विद्यां यो न जानाति शङ्कर!।
तस्य विद्या न सिद्धिः स्याज्जन्मकोट्यर्चनैरपि।।१५।।
दीपिनी कुल्लुकाविद्या विज्ञेया साधकैः स्वयम्।
या महाकुल्लुका देवी सा च यद्दीपिनी स्मृता।।१६।।
कालीबीजं शब्दबीजं ह्रींबीजं तदनन्तरम्।
सर्वेषां तन्त्रमन्त्राणां दीपिनीति प्रशस्यते।।१७।।
जपान्ते वा जपादौ वा दीपिनीं यत्नतो जपेत्।
न जपेद्यदि मोहेन तस्य सिद्धिर्न जायते ।।१८।।
अतिगुह्यं परंब्रह्म कथितं वत्स! वाञ्छया।
इति ते कथितं देव! सर्वसारं परात्परम्।।१९।।
प्रकाशात्सर्वनाशः स्यात्सिद्धिहानिश्च जायते।।२०।।

माधवी- श्री आनन्दभैरवी ने कहा--हे शङ्कर! जो परमा विद्या दीपिनी को नहीं जानता उस साधक को विद्या-सिद्धि प्राप्त नहीं होती है। भले ही वह कोटि जन्मों तक पूजन वह अर्चन करता रहे। साधकों को 'दीपिनी' कुल्लुका विद्या अवश्य जाननी चाहिये। जो महाकुल्लुका देवी है वही 'दीपिनी' भी कही जाती है। काली बीज (क्रीं), और शब्द बीज (हूँ), और इसके पश्चात् ह्रींबीज का उच्चारण करे। समस्त मन्त्र तन्त्रों में यही दीपिनी अर्थात् क्रीं-ह्रीं कही जाती है। जप के अन्त में या जप के प्रारम्भ में 'दीपिनी' विद्या का प्रयत्नपूर्वक जप करना चाहिए। मोहवश जप करने से सिद्धि की प्राप्ति नहीं होती है। हे परम ब्रह्म! हे वत्स! यह अतिगुह्य विषय तुम्हारी इच्छा को देखकर ही मैंने कहा है। यह सभी सारों का सार है और इसके प्रकाशन से सर्वनाश होता है तथा सिद्धि की हानि भी होती है। ।।१५-२०।।

श्री आनन्दभैरव उवाच

एतदद्भुतमाहात्म्यं त्वन्मुखात् संश्रुतं मया।
अद्यप्रभृति देवेशि! तव दासो भवाम्यहम्।।२१।।

इति श्रीनिगमतत्त्वसारतन्त्रे आनन्दभैरव-आनन्दभैरवीसंवादे भावमाहात्म्यं'' नाम एकादशः पटलः।।११।।

◆◆◆◆◆

माधवी- श्री आनन्द भैरव ने कहा--हे देवेशि! इस अद्भुत माहात्म्य को मैंने तुम्हारे मुख से सुना। इसलिए हे देवेशि! आज से मैं तुम्हारा दास होकर रहूँगा।।२१।।

श्रीनिगमतत्त्वसारतन्त्र में भावमाहात्म्यनामक एकादश पटल की अजय कुमार उत्तमविरचित 'माधवी' हिन्दी टीका पूर्ण हुई।।११।।

+++++

॥ समाप्तोऽयं ग्रन्थः॥

●

नारदपाञ्चरात्रान्तर्गतम्

श्रीमाहेश्वरतन्त्रम्

श्रीसुमङ्गल्या पराशक्त्याविर्भावितम्

श्रीशिवेनोमाया उपदिष्टं ब्रह्मरहस्यात्मकम् 'सरला' हिन्दी व्याख्योपेतम्

सम्पादकः व्याख्याकारश्च : डॉ० सुधाकर मालवीय

माहेश्वरतन्त्र सभी तन्त्रों में तत्त्वज्ञान को बतलाने वाला उत्तम तन्त्र ग्रन्थ है। भगवान् शंकर एवं भगवती पार्वती के संवाद के मध्य प्रस्तुत इस ग्रन्थ में ब्रह्मज्ञान एवं आत्मसाक्षात्कार की प्रक्रिया वर्णित है। ५१ पटलों में यह तन्त्र पूर्ण है और उत्तराम्नाय का प्रतिपादक है। इस ग्रन्थ में श्रीकृष्ण और उनकी प्रियाओं के मध्य लीला का अत्यन्त रहस्यपूर्ण वर्णन है। प्रायः ३०६० श्लोकों में प्रतिपादित यह तन्त्र ग्रन्थ नारदपाञ्चरात्रागम से सम्बन्धित है।

पाञ्चरात्रमत वैष्णव सम्प्रदाय का एक रूप है। पाँच प्रकार की ज्ञानभूमि पर विरचित होने के कारण यह मत 'पाञ्चरात्र' कहा गया है—रात्रं ज्ञानवचनं ज्ञानं पञ्चविधं स्मृतम्। इस मत के सिद्धान्तानुसार सृष्टि की सब वस्तुएँ पुरुष, प्रकृति, स्वभाव, कर्म और दैव–इन पाँच कारणों से उत्पन्न होती हैं। पाञ्चरात्र मत की मुख्य शिक्षा कृष्ण की भक्ति ही है। परमेश्वर के रूप में कृष्ण की भक्ति करने वाले उनके समय में भी विद्यमान थे जिनमें गोपियाँ मुख्य थीं। पाञ्चरात्रमतानुसार वासुदेव; संकर्षण; प्रद्युम्न और अनिरुद्ध का श्रीकृष्ण के चरित्र से अति घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः पाँचरात्र संहिताओं में वैष्णवों के धर्म और आचार का विस्तृत वर्णन है। माहेश्वर प्रोक्त प्रस्तुत तन्त्र में श्रीकृष्ण की भक्ति परा सगुण लीला का वर्णन है।

इस महत्त्वपूर्ण आगम ग्रन्थ की आनुपूर्वी 'सरला' हिन्दी व्याख्या काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कलासंकाय के संस्कृत विभाग के लब्ध प्रतिष्ठ विद्वान् डॉ० सुधाकर मालवीय द्वारा की गई है। इदंप्रथमतया की गई हिन्दी व्याख्या तन्त्र एवं वैष्णव आगम के विद्वानों के लिए अत्यन्त उपादेय एवं संग्रहणीय है।

पृ० सं० ५९७ मूल्य : रु० २००–००

ज्ञानार्णवतन्त्रम्

सम्पादक एवं भूमिका लेखक : डॉ. सुधाकर मालवीय

हिन्दी अनुवादक : पं. रामरञ्जन मालवीय

ज्ञानार्णव तन्त्र का प्रस्तुत संस्करण श्रीविद्या के उपासकों के समक्ष इदं प्रथमतया हिन्दी के साथ प्रस्तुत है। प्रस्तुत संस्करण का मूल आनन्दाश्रम के मुद्रित मूल पर आधारित है तथा अनेक स्थानों पर पाठों को मन्त्रमहोदधि आदि अन्य ग्रन्थों से मिलाकर शुद्ध किया गया है। श्रीविद्याविषयक अनेक ग्रन्थ सम्प्रदायानुसार प्राप्त होते हैं। ज्ञानार्णव तन्त्र का उनमें एक विशिष्ट स्थान है। त्रिपुरसुन्दरी की उपासना इस तन्त्र का मुख्य विषय है।

श्रीविद्या के कादि, हादि और कहादि नामक तीन भेद प्रसिद्ध हैं। कादियों की देवी काली, हादियों की त्रिपुरसुन्दरी और कहादियों की तारा (अथवा नीलसरस्वती) हैं। तीनों सम्प्रदायों के अपने-अपने मान्य ग्रन्थ हैं, जिनमें त्रिपुरसुन्दरी की उपासना पद्धति का तन्त्र ग्रन्थ ज्ञानार्णव है।

प्रस्तुत ज्ञानार्णव तन्त्र की हिन्दी व्याख्या प्रथमतः महामना संस्कृत शोध संस्थान के विद्वान् पं. रामरञ्जन मालवीय द्वारा की गई है। ग्रन्थ के सम्पादक एवं भूमिका लेखक डॉ. सुधाकर मालवीय का. हि. वि. वि. वाराणसी के लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् हैं। इन दोनों विद्वानों द्वारा सम्पादित एवं अनूदित यह तन्त्र ग्रन्थ संग्रहणीय है।

पृ. 344

मूल्य : रू. 200/-

कुलार्णवतन्त्रम्

(ऊर्ध्वाम्नायतन्त्रात्मकम्-'कल्याणी'-हिन्दी व्याख्या सहितश्च)

सम्पादक एवं भूमिका लेखक : डॉ. सुधाकर मालवीय

हिन्दी अनुवादक : पं. चितरञ्जन मालवीय

कौल शब्द 'कुल' शब्द से निष्पन्न होता है। कुल शब्द के अन्यान्य अर्थ पाये जाते हैं—1. मूलाधारचक्र, 2. जीव, प्रकृति, दिक्, काल, पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश—इन नौ तत्त्वों की 'कुल' संज्ञा है। ३. श्रीचक्र के अन्तर्गत त्रिकोण की कुल संज्ञा है, इसी को योनि भी कहते हैं। सौभाग्यभास्कर ग्रन्थ में कौलमार्ग शब्द का स्पष्टीकरण 'कुल' = शक्ति, अकुल = शिव के रूप में किया गया है। कुल से अकुल का अर्थात् शक्ति से शिव का सम्बन्ध ही कौल है। कौलमतानुसार शिवशक्ति में कोई भेद नहीं है। कुलार्णव तन्त्र कौल सम्प्रदाय का अत्यन्त प्राचीन एवं प्रामाणिक ग्रन्थ है।

प्रस्तुत संस्करण का मूल पाठ आर्थर एवलोन के संस्करण पर आधृत है। महामना संस्कृत शोध संस्थान के विद्वान् पं. चितरञ्जन मालवीय द्वारा इस ग्रन्थ की इदं प्रथमतया हिन्दी व्याख्या प्रस्तुत की गयी है। इस ग्रन्थ के सम्पादक एवं भूमिका लेखक डॉ. सुधाकर मालवीय, संस्कृत विभाग, कला संकाय, का. हि. वि. वि. वाराणसी के लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् हैं। इस प्रकार काशी के लब्धप्रतिष्ठ विद्वानों द्वारा संशोधित एवं व्याख्यात यह ग्रन्थ अत्यन्त उपादेय है और शोधार्थियों द्वारा संग्रहणीय है।

पृ. 392

मूल्य : रु. 200/-

श्रीस्वामिनारायणतीर्थविरचित

योगसिद्धान्तचन्द्रिका

भूमिका, परिशिष्ट, टिप्पणी आदि से विभूषित

संपा. - प्रो. विमला कर्नाटक

सत्रहवीं शताब्दी के आचार्य श्री स्वामिनारायणतीर्थविरचित 'योगसिद्धान्तचन्द्रिका' संस्कृत में उपनिबद्ध एक मौलिक टीका है। व्यासभाष्यानुसारी योगसूत्र की टीका होते हुए भी इसमें ऐसे नवीन विषयों की उद्भावना हुई है, जो पातञ्जलयोग की पूर्ववर्ती तत्त्ववैशारदी, योगवार्त्तिक आदि प्रौढ संस्कृत टीकाओं में उपलब्ध नहीं है। इसे योगसूत्र का उपजीव्यग्रन्थ कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। षड्दर्शननिष्णात स्वामिनारायणतीर्थ का यह चूडात्र निदर्शन है। योगसूत्रं के अनुसन्धानकर्त्ताओं के लिये अत्यन्त उपयोगी होने के कारण प्रोफेसर विमला कर्नाटक ने इस टीका को अपने पूर्ण रूप से प्रकाशित करने के अपने चिरसंकल्प को साकार किया है। इसके लिये डॉ. विमला कर्नाटक ने भारतवर्ष के प्रमुख-प्रमुख संस्कृत शोधप्रतिष्ठानों से सम्बन्धित पाण्डुमातृकाओं का सश्रम संकल्प कर उनका अनुशीलन किया। इस प्रकार सौ वर्ष पूर्व खण्डित अवस्था में प्रकाशित 'योगसिद्धान्तचन्द्रिका' टीका को अनुसन्धान की पाठभेदपरक पद्धति से परिष्कृत एवं संवर्द्धित कर उसे पूर्ण अवस्था में प्रकाशित किया है। इस प्रकार पातञ्जलयोगवाङ्मय की श्रीवृद्धि करने में डॉ. विमला कर्नाटक का भगीरथ प्रयास वर्तमान 'योगसिद्धान्तचन्द्रिका' संस्करण में स्पष्टतः परिलक्षित होता है।

रु. 200/-